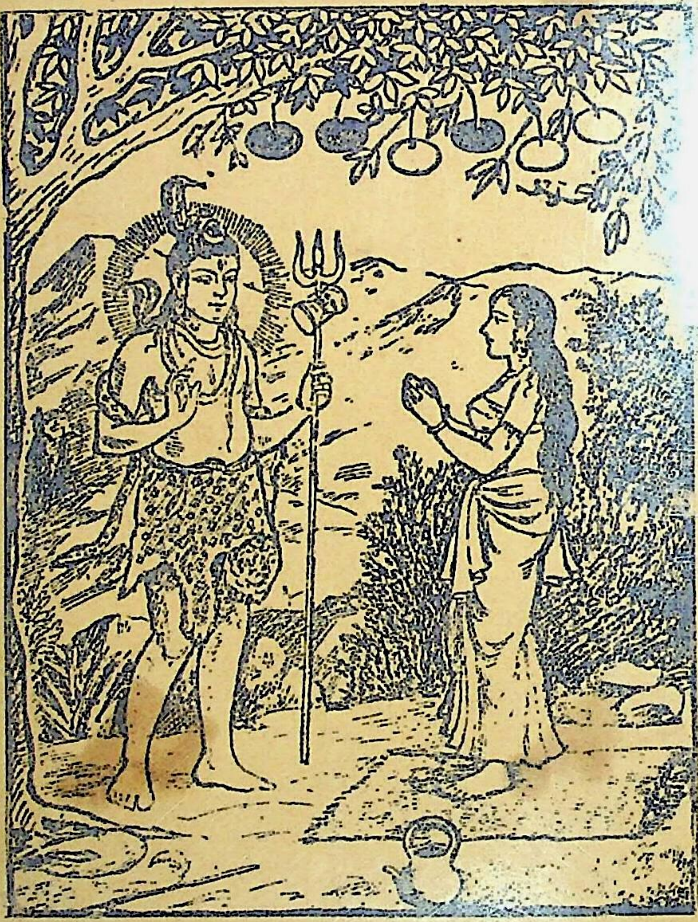
॥ श्री हरिः ॥

धार्मिक तथा आयुर्वेदिक दृष्टि में—

विल्वफल-अमृतफल

(उदर रोगों की रामवाण ओषधि)



लेखक—श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

विल्वफल-अमृतफल

लेखक

श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी

प्रकाशक—

संकीर्तन भवन, प्रतिष्ठानपुर
(झूसी) प्रयाग

प्रथम संस्करण २००० प्रति } अक्टूबर आश्विन २०३७ { मूल्य २ रुपया

● प्रकाशक

संकीर्तन भवन
प्रतिष्ठानपुर (झूसी)
प्रयाग

● मुद्रक

बंशीधर शर्मा
भागवत प्रेस
८५२ मुट्ठीगंज, प्रयाग

॥ श्रीहरि ॥

विषय-सूची

दो शब्द

बिल्व का फल आँव का शत्रु है, बहुत से लोगों की प्रकृति होती है कि जो खाते हैं उसका अधिकांश भाग आँव बन जाता है, वह आँव आतों में स्थिर होकर जम जाता है। पुराना आँव होने पर नाना रोगों को उत्पन्न करता है। इसलिये चाहे जैसे हो आतों में स्थित आँव को बाहर निकाल ही देना चाहिये। सौंफ और गुड़ के साथ बेल का सेवन किया जाय तो वह शनैः-शनैः आमाशय पक्वाशय में स्थित आँव को जैसे हो तैसे बाहर निकाल देगा।

कुछ लोंग कहते हैं—"हम जब बेल खाते हैं तभी हमें आँव हो जाता है। आँव बेल से होता ही नहीं है, वह आँतों में स्थित आँव को बाहर निकालता है। आँव कोई एक ही दिन में थोड़े ही हो जाता है, वह तो वर्षों का एकत्रित हो जाता है, पुराना होने पर निकलता नहीं। नये-नये रोगों को जन्म देता है। बेल खाने से वह ढीला होता है और बाहर निकलने लगता है। आँव तो जितना ही निकल जाय आँतें उतनी ही हलकी और रोग रहित होंगी। कहावत है—

आँत भारी तो गात भारी।

अतः आँतों की शुद्धि के लिये सभी नर-नारियों को पक्के-कच्चे जैसे भी विल्व के फल मिलें उन्हें सेवन करना चाहिये।

प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

॥ श्रीहरिः ॥

विल्वफल-अमृतफल

[भूमिका]

(१)

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो
वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ विल्वः।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु
मायाऽऽन्तरायाश्च बाह्याऽलक्ष्मीः ॥*

(श्रीसूक्त ६)

छप्पय

हे आदित्य समान बरनवारी जग-जननी।
तव तपतें उतपन्न वनस्पति जग सुख करनी॥
अति उदार कर कमल विल्व तातें उपजायो।
जो समृद्धिको हेतु वृक्ष श्री भुवन कहायो॥
तासु विल्वके सुखद फल, सकल अविद्या हिय हरें।
दुर्गति और दरिद्रता, दूर दुरित बाहर करें॥

आज से लगभग पचपन-छप्पन वर्ष पूर्व मैंने काशीजी से गंगा किनारे-किनारे श्री हरिद्वार तक की पैदल परिक्रमा की थी।

* हे आदित्य वर्ण वाली प्रकाशस्वरूपे माँ लक्ष्मी! वृक्षों में सर्वश्रेष्ठ विल्ववृक्ष तुम्हारे ही तप से पैदा हुआ है। उसके फल हमारी बाहर की तथा भीतर की अलक्ष्मी—दरिद्रता—को दूर करें।

वे कितने त्यागमय वैराग्यमय दिवस थे। उनका स्मरण करके हृदय में एक प्रकार की हूक उठती है। इन्द्र और गोविन्द दो विद्यार्थी मेरे साथ थे। हम प्रातःकाल से ही भगवती भागीरथी के तट-तट चलने लगते। जहाँ दोपहर हो जाता वहाँ किसी ग्राम के समीप किसी पुराने फूटे मन्दिर में, किसी कुटिया में अथवा किसी सघन वृक्ष या कूप के समीप ठहर जाते। पहिले तो उस स्थान को झाड़-बुहार करके स्वच्छ करते गोबर मिल जाता तो उसे लीपते। फिर वे दोनों विद्यार्थी गाँव में भिक्षा लेने जाते। द्विजातियों के घर-घर से रोटी-दाल आदि माँग कर ले आते। मुझे लाकर दे देते। मैं उस भिक्षान्न को तीनों में बाँट देता। भिक्षा करके पुनः आगे को चल देते। उन दिनों चलते रहना ही हमारे जीवन का व्यापार था। अनूपशहर में पहुँच कर गोविन्द ने कहा—मैं यहीं रहूँगा।" मैंने कहा—बहुत अच्छा है तुम यहीं रह जाओ।" वह वहाँ रह गया। उसने वहाँ एक पाठशाला खोली उसमें पढ़ाने लगा। सेठ केशोराम के अट्टे में रहता था। एक दिन जाड़े में अँगीठी जलाकर चारों ओर की किवाड़ें खिड़कियाँ बन्द करके सो गया, सो सोता-का-सोता ही रह गया। चिरकाल की निद्रा में निमग्न हो गया।

अब हम और इन्द्र ब्रह्मचारी दो आगे बढ़े। चलते-चलते ऋषिकेश के आगे प्राचीन बद्रीनाथ के मार्ग पर स्वर्गाश्रम से ६ मील आगे गरुड़चट्टी पर पहुँचे। वह स्थान मुझे बहुत ही मनोहर दर्शनीय और सुखद प्रतीत हुआ। वहीं रहकर कुछ जप अनुष्ठान करने की इच्छा हुई। वहीं डेरा डाल दिया। इन्द्र ने सोचा—"महाराज तो यहाँ जप अनुष्ठान में बैठ जायँगे, मुझे ही जाकर स्वर्गाश्रम ऋषिकेश से भोजनादि की सामग्री लानी पड़ेगी।" यह सोचकर वह रात्रि में ही वहाँ से चुपके से नौ दो ग्यारह हुआ। अब अपने ही राम अकेले ठंठनपाल मदनगुपाल रह गये।

बिना सहायक के जप अनुष्ठान हो नहीं सकता। अतः मैं भी वहाँ से चलकर ज्वालापुर आ गया। उन दिनों ज्वालापुर गुरुकुल के आचार्य श्री स्वामी शुद्धबोध तीर्थ जी महाराज (पूर्व पण्डित गङ्गादत्त जी शास्त्री) थे। वे हमारे पं० नरदेव जी शास्त्री वेदतीर्थ के गुरु थे। शास्त्रीजी और हम सन् २१ में लखनऊ जेल में साथ-साथ रहे। स्वामी जी की जन्म भूमि बुलन्दशहर जिले के बेलोन गाँव में थी। मेरे प्रति उनका पुत्रवत् वात्सल्य था। वे जगन्नाथपुरी के शंकराचार्य के शिष्य थे। शंकराचार्य जी की भी जन्मभूमि बेलोन ही थी। उनके एक बड़े शिष्य पंडितस्वामी थे। किसी विषय पर गुरु शिष्य में मतभेत हो गया। पण्डितस्वामी जगन्नाथपुरी के मठ को छोड़कर कनखल आ गये। वहाँ उन्होंने श्रीमत् आदि शङ्कराचार्य जी के वावा गुरु श्रीमत् गौड़पादाचार्य के नाम से गौड़पादमठ मुक्तिपीठ नाम से नहर के किनारे एक सुन्दर-सी कोठी बनायी। उनका देहान्त हो गया। वह मुक्तिपीठ श्री स्वामी शुद्धबोध जी तीर्थ के ही अधिकार में थी। खाली पड़ी थी। उन्होंने कहा—तुम्हें अनुष्ठान ही करना है तो मुक्तिपीठ में रहकर करो। मैं तो यही चाहता ही था। 'अन्धे तुझे क्या चाहिये ? दो आँख' उन दिनों मुक्तिपीठ के चारों ओर घोर जङ्गल था। उन दिनों गुरुकुल काँगड़ी, काँगड़ी ग्राम में ही था। पीछे उस ग्राम से उठकर वहाँ कनखल में मुक्तिपीठ के समीप आ गया। अब तो मुक्तिपीठ नगर के बीच में आ गया।

मैं सर्वथा एकाकी उस इतनी बड़ी कोठी में घोर जङ्गल में अकेला ही रहकर जप अनुष्ठान करता। तेरह महीने वहाँ रहा। वहाँ रहते समय ही मुझे घोर संग्रहणी हो गयी। एक-एक दिन मैं सौ-सौ बार शौच जाना पड़े। सम्पूर्ण शरीर में शोथ हो गया। उन दिनों वहाँ कनखल में दो प्रसिद्ध वैद्य थे। एक तो पर्वतीय पण्डित जागेश्वर शास्त्री जी दूसरे पण्डित रामचन्द्र जी शास्त्री

श्री वैद्य जागेश्वरजी संग्रहणी चिकित्सा के विशेषज्ञ माने जाते थे। वे संग्रहणी वालों को श्रीचूर्ण देते थे। श्रीचूर्ण और कुछ नहीं। कच्चे बेलों को सुखाकर उसका चूर्ण बनाया जाता था।

मुझे लगभग दो वर्ष तक संग्रहणी रही। नाना प्रकार की चिकित्सायें करायीं। अन्त में एक व्यक्ति ने कहा—आप बेल का सेवन कीजिये।" तब तक मैं बेल का महत्त्व जानता नहीं था। बड़े कागदी बेल तब तक मैंने देखे भी नहीं थे। जंगली बेलों को ही बेल समझता था। वे खाने में कड़वे होते थे। उनके भीतर बहुत से बीज भरे रहते थे, वे बीज गोंद की भाँति लिबलिपे रस में सने रहते थे। उन बेलों में हीक आती थी। मुझे वे बेल तनिक भी रुचिकर नहीं थे। अतः उस समय मैंने बेलों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। गँवे में लाला बाबूलाल जी के यहाँ पर्पटी से दुग्ध का ४० दिन कल्प किया। उससे कुछ लाभ हुआ। किन्तु संग्रहणी जड़ से गयी नहीं। फिर उभड़ आयी। तब मैंने बेल का सेवन आरम्भ किया। झूसी में हंसतीर्थ में जहाँ मैं आकर अनुष्ठान करने लगा। वहाँ एक बेल का पेड़ था। उस पर नारियल की भाँति बड़े-बड़े बेल लगते। ऐसे बेल मैंने जीवन में न कभी देखे थे, न खाये थे। वहाँ के महन्त उन सब बेलों को तोड़कर रख लेते और ज्यों-ज्यों वे पकते जाते थे, वे नित्य मुझे एक बेल देते। उन बेलों में न तो हीक थी, न बहुत बीज ही थे। दो चार बीज होते। स्वाद में वे पके आम की भाँति वे मुझे इतने स्वादिष्ट लगे कि तब से बेल मेरे जीवन के चिरसङ्गी बन गये। उनसे मुझे बड़ा लाभ हुआ। फिर मैंने वैद्यक ग्रन्थों का अध्ययन किया। तब मुझे बेल का महत्त्व मालूम हुआ। फिर मैं सब कुछ छोड़कर केवल बेल और दूध पर ही रहने लगा। हंसतीर्थ के बेल तो वैशाख ज्येष्ठ दो ही महीने मिलते। अब मुझे बेल कैसे मिलें ? कहाँ मिलें। मैं इसी चिन्ता में था कि एक दिन मैं घूमता

हुआ नागेश्वर के पास शङ्खमाधव के मुंशी के बगीचे में चला गया। वहाँ शङ्खमाधवजी के मन्दिर के अहाते में एक बेल का पेड़ देखा। उस पर कच्चे बेल लगे थे। मैं कुछ बेल तोड़ लाया और उन्हें भूनकर खाने लगा। वे उतने स्वादिष्ट तो नहीं थे। किन्तु पेट भरने के आहार तो थे ही, मुझे ऐसा लगा भगवान् ने यह पेड़ केवल मेरे ही लिये पैदा किया है। वह बारहमासी विल्व वृक्ष था। ऐसा बेल मैंनें आज तक कहीं नहीं देखा। उसमें पके भी फल रहते थे, कच्चे भी, छोटे-छोटे भी और बौर भी। बारहो महीने उसमें से मुझे बेल मिलते जाते थे। मैं १०-१५ दिन के पश्चात् वहाँ जाता। ३०-४०-५० बेल तोड़ लाता। उन्हें फोड़कर भाड़ में भुनवा लेता। भुने हुए बेल १०-१५ दिन बिगड़ते नहीं हैं। एक भड़भूजा मेरा भक्त था। भक्त भी ऐसा कि उसे अनन्य कहें या फनन्य। फनन्य—अन्ध भक्त।

बात यह है कि बेल को बिना फोड़े अग्नि में डाल दो तो गरम होने पर उसमें विस्फोट तत्त्व–गैस–बन जाता है और वह ऐसा फूटता जैसे तोप का गोला, कभी-कभी तो वह छत को तोड़ देता है। इसलिये सदा बेल को अग्नि में भूनते समय उसे फोड़कर डालना चाहिये। मैं सदा ऐसा ही करता था। उस भड़भूजे को बेल भूनने देता था; तो फोड़कर ही देता था।

एक दिन मैं शङ्खमाधव से ४०-५० बेल लाया एक लड़का हजारीलाल मेरे पास रहता था। रात्रि में ११। १२ बजे मैंने उसे वे सब बेल दिये कि भड़भूजे को भूनने को बेल दे आओ, उससे कह देना फोड़कर भाड़ में डाले। वह बेल लेकर गया। भड़भूजा सो रहा था, उसने उसे जगाकर कहा—महाराज ने ये बेल भूनने को भेजे हैं।"

यह सुनकर वह बड़ा प्रसन्न हुआ बोला—महाराज की बड़ी कृपा है, भाड़ गरम है अभी डालता हूँ। प्रातःकाल ले जाना।"

बेल देकर वह चला आया। मैंने पूछा—बेल दे आये ? उसने कहा—अभी भाड़ गरम है मैं अभी डालता हूँ।" मैंने फिर पूछा—तुमने फोड़कर डालने को कहा या नहीं ? उसने कहा—अरे, यह कहना तो मैं भूल ही गया।"

मैंने कहा—जाओ-जाओ-अभी शीघ्रता से जाकर कह आओ नहीं उसका भाड़ फूट जायगा, झोंपड़ी जल जायगी।"

यह सुनकर वह उलटे पाँव गया। भड़भूजा बेलों को भाड़ में डालकर फिर सो गया था। उसने जाकर जगाया और कहा—बाबा ! बेल फोड़े या नहीं ?"

उसने कहा—"मैंने तो फोड़े नहीं वैसे ही डाल दिये।"

तब उसने कहा—"शीघ्रता से सब निकाल कर फोड़कर डालिये नहीं भड़-भड़ करके तुम्हारे भाड़ को फोड़ देंगे।"

उसने कहा— 'बेटा ! तुम जाओ। महाराज जी की कृपा से कुछ नहीं होगा।" यह कहकर बुड्ढा फिर सो गया।

उसने आकर ये सब बातें मुझसे कहीं। मैं बड़ा चिन्तित हुआ। मुझे नींद नहीं आयी। सोचता रहा—भड़भूजे का भाड़ फूट गया होगा। प्रातः उठते ही मैं उसके यहाँ पहुँचा। देखा बुड्ढा आनन्द से बैठा है, भाड़ फूटा नहीं। सब बेल भुने हुए बाहर पड़े हैं। मुझे देखकर वह परम प्रमुदित हुआ बोला—"महाराज ! सब भुन गये हैं, आप ले जायँ।"

मैं बेलों को लेकर चला आया। उसकी प्रगाढ़ निष्ठा की मैं मन-ही-मन प्रशंसा करता हुआ अपनी कुटी पर आ गया। प्रसङ्ग वश मैंने यह बेल की अपबीती कहानी सुना दी।

हाँ तो मैं तब से बेल का भक्त बन गया। जब तक कच्चा बेल मिलता भूनकर खाता। पक्का मिलने पर वैसे ही या शरबत बनाकर लेता। कच्चे-पक्के बेलों को सुखा लेता उनके चूर्ण को लेता। मुरब्बा बनवाकर लेता। सारांश बारहों महीने बेल का

सेवन करता। इससे मुझे अत्यन्त लाभ हुआ। फिर मैंने अपने सहस्रों साथियों के ऊपर बेल का प्रयोग किया। सदा बेल को सुखाकर उसका चूर्ण रखता हूँ। जिन्हें पेट का कोई भी रोग होता है, मैं बेल को देता हूँ और शत प्रतिशत लोगों को लाभ हुआ है, होता है। बेल के अनेक प्रकार के प्रयोग मैं करता हूँ। अब मैंने सोचा बेल जो अमृत के तुल्य फल है, उस पर आयुर्वेदिक तथा धार्मिक दृष्टि से जो भी मैंने कुछ अनुभव किया है, अपने पाठकों के सम्मुख रखूँ। इसी उद्देश्य में मेरा यह अत्यन्त लघु प्रयास है। मैंने जो भी कुछ समझा-बूझा है, उसका इस लघु पुस्तिका में वर्णन करूँगा। वास्तव में तो संसार में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं जो किसी-न-किसी रोग की ओषधि न हो। संसार की समस्त वस्तुएँ ओषधियाँ हैं, किन्तु उन्हें जानकर उसका संयोजन करने वाला—उसका सम्यक् प्रयोग करने वाला संयोजक दुर्लभ है। इसीलिये भगवान् आत्रेय पुनर्वसु द्वारा उपदिष्ट उनके शिष्य महर्षि अग्निवेश द्वारा रचित चरक संहिता में कहा गया है—

ओषधीनां परां प्राप्तिं कश्चिद्वेदितुमर्हति।
योगवित्त्वप्यरूपज्ञस्तासां तत्त्व विदुच्यते॥
किं पुनर्यो विजानीयादोषधीः सर्वथाभिषक्॥*

(च० सं० सू० स्था० १२२ श्लोक)

---

* केवल ओषधि का नाम तथा रूप मात्र ही जान लेने से कोई ओषधियों के प्रयोग को जानने के लिये शक्तिमान् नहीं होता। जो रूप न जानता हो वह भी यदि प्रयोग जानने वाला हो तो वह ओषधियों का तत्त्ववेत्ता कहलाता है, फिर जो वैद्य औषधियों को सब प्रकार से जानता है, वह तत्त्ववेत्ता कहा जाय इसमें तो फिर कहना ही क्या है ?

छप्पय

विल्व अमृतफल तुल्य विल्वफल सब दुखहारी।
छाया, जड़, फल, फूल, पत्र, कंटक गुनगारी ॥
श्रीफल जाको नाम भयो परगट श्री तपतैं।
दुख दारिद नसि जायँ विल्व फलके सेवनतैं ॥
शिव शङ्कर होवैं मुदित, त्रिदल पत्र उन सिर चढ़ैं।
श्रद्धातैं सेवैं सुघी, आयु, कीर्ति श्री तिनि बढ़ैं ॥



विल्वोत्पत्ति

[२]

भृगो लक्ष्मी च या धेनुर्गोरूपा सागता महीम् ।
तद् गोमयभवो विल्वः श्रीश्चतस्मादजायत ।।*

(वह्नि पुराणे)

छप्पय

अति पवित्रतम गाय गाय सम कोई नाहीं ।
गौकी जो-जो वस्तु परम पावन जग माहीं ।।
गोबर, घृत, दधि, दूध, मूत्र, गोरोचन छै जो ।
सब अति पावन कहे यज्ञमें काम आइँ सो ।।
भृगुकी लक्ष्मी धेनु जो, भू पै गौ बनिकें रहीं ।
ता गोबरतैं विल्व तरु, तातैं श्री पैदा भईं ।।

यह संसार ब्रह्म का ही पसारा है, अणु परमाणु में सर्वत्र ब्रह्म-ही-ब्रह्म व्याप्त है, ऐसा कोई देश नहीं, ऐसा कोई काल नहीं। ऐसी कोई वस्तु नहीं जहाँ ब्रह्म व्याप्त न हो। ब्रह्म के बिना किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं। कहीं वह व्यक्त रूप में है, कहीं अव्यक्त रूप में है। कहीं स्पष्ट है, कहीं अस्पष्ट है। कहीं अणु रूप में है, कहीं

---

* महर्षि भृगु की जो लक्ष्मी और धेनु थी, वही पृथ्वी पर गौ रूप होकर उत्पन्न हुई। उसी गौ के गोबर से विल्व वृक्ष की उत्पत्ति हुई। उस विल्व वृक्ष से ही श्री उत्पन्न हुई।

महान् रूप है। जो वस्तु जितनी ही स्वच्छ निर्मल होगी, उसमें उतना ही ब्रह्म का प्रकाश स्पष्ट दिखायी देगा। जैसे सूर्य का प्रकाश समस्त वस्तुओं पर पड़ता है। पाषाण घन है, उसके भीतर प्रकाश उतना स्पष्ट न दीखेगा जितना निर्मल स्वच्छ कांच के भीतर से अतः जो भी कुछ दिखायी देता है, सब ब्रह्म का ही वैभव है। जहाँ ब्रह्म का विशेष प्रकाश है उसे विभूति कहते हैं। श्रीमद्गीता में श्रीमद्भागवत में भगवान् ने अपनी विभूतियों का वर्णन किया है। गीता का दशवाँ अध्याय विभूति योग ही है। उसमें भगवान् ने अपनी विभूतियों को गिनाया है और अन्त में कह दिया है— तुम इतना ही जान लो जो-जो तुम्हें विशेष विभूति वाली, श्रीसंपन्न, शक्तियुक्त वस्तुएँ दिखायी दें, उन सबको मेरे ही विशेष अंश से सम्भव जानो।×

इसी प्रकार श्रीमद्भागवत में भी भगवान् अपनी विभूतियों को बताने के अनन्तर कहते हैं—देखो, उद्धव ! यदि मैं गणना करने लगूँ तो किसी काल तक विश्वब्रह्माण्ड के परमाणुओं की गणना तो कर सकता हूँ, परन्तु मैं अपनी विभूतियों की गणना नहीं कर सकता। क्योंकि यह एक ही ब्रह्माण्ड नहीं है। मेरे रचे हुए कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड हैं, जब उन समस्त ब्रह्माण्डों की ही गणना नहीं हो सकती तो भला, फिर मेरी विभूतियों की गणना कैसे हो सकती है ? इसलिये तुम ऐसा समझो तुम्हें जहाँ भी जिसमें भी तेज, श्री, कीर्ति, ऐश्वर्य, लज्जा, त्याग, सौन्दर्य, सौभाग्य, पराक्रम, तितिक्षा और विज्ञान आदि-आदि सद्गुण—श्रेष्ठगुण—

× यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
यत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसंभवम्॥

(श्री० गी० १० अ० ४१ श्लो०)

दृष्टिगोचर हों, उसे तुम मेरा ही अंश—मेरी ही विभूति मानो।"❀

तो जिस विल्व वृक्ष से श्री की उत्पत्ति हुई है, अथवा जिस विल्व वृक्ष को श्री ने अपनी तपस्या से उत्पन्न किया है, वह विल्व वृक्ष तो भगवान् की विशेष विभूति होगा ही, यह बात विल्व वृक्ष की उत्पत्ति से स्वयं ही सिद्ध हो जाती है। विल्व वृक्ष की उत्पत्ति की पुराणों में कई प्रकार की कथायें हैं और सभी सत्य हैं, क्योंकि अनेकों ब्रह्माण्ड हैं और प्रत्येक कल्प में नयी सृष्टि होती है और कल्प भेद से सभी कथायें सत्य हैं।

वह्नि पुराण में विल्व की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बताया है—महर्षि भृगु की जो लक्ष्मी तथा धेनु है वही पृथ्वी पर गौ रूप में प्रकट हुई उसी के गोबर से श्रीजी उत्पन्न हुई। उस समय पार्वतीजी ने देखा—इसके पति तो निराकृति हैं, उनकी कोई आकृति ही नहीं। तब पार्वतीजी ने श्रीजी को शाप दिया—हे अधमे! तुम सर्व भोग्या हो जाओ। अर्थात् सभी लोग तुम्हारा उपभोग करें।"

इस प्रकार के शाप को सुनकर श्रीजी बहुत दुखी हुई। उन्होंने भगवती उमा की बहुत अनुनय विनय की और बोली—ऐसा नहीं होना चाहिये। तुम समस्त लोकों की प्यारी हो। सुर असुर सभी तुम्हें नमस्कार करते हैं, सभी आपका आदर करते हैं। तुम सब लोकों की माता हो जगज्जननी हो। विशेषकर जो निर्बल हैं, बलहीन हैं, उनकी तो तुम पालन करने वाली हो। आप मेरे इस शाप को लौटा लीजिये। मैं सर्व भोग्या न होऊँ।"

❀ संख्यानं परमाणूनां कालेन क्रियते मया।
न तथा मे विभूतीनां सृजतोऽण्डानि कोटिशः॥
तेजः श्रीः कीर्तिरैश्वर्यं ह्रीस्त्यागः सौभगं भगः।
वीर्यं तितिक्षा विज्ञानं यत्र यत्र स मेंऽशकः॥
(भा० ११ स्क० १६। ३९, ४०)

श्री जी की अनुनय विनय को सुनकर जगज्जननी भगवती उमा प्रसन्न हो गयीं और अपने शाप को लौटाती हुई बोलीं—देखो, एक काम करो अभी जाकर तुम क्षीरसागर में चन्द्रमा, गौ तथा धन के साथ निवास करो। तुम वहाँ तब तक निवास करो जब तक देवता और असुर क्षीरसागर का मन्थन न करें। समुद्र का जब मन्थन होगा तब तुम समुद्र से प्रकट होगी और भगवान् विष्णु की पत्नी बनोगी। भगवान् विष्णु जो तुम्हारे पति होंगे वे समस्त लोकों के पूजनीय तथा सर्वश्रेष्ठ देव होंगे। वे बड़े बलशाली होंगे। तुम सदा उनके वक्षःस्थल में स्थित रहोगी। तब तुम समस्त लोकों में विचरण करोगी और सभी लोग तुम्हारा उपभोग करेंगे। तुम राजाओं की राज्य श्री होओगी। तुम जल के विन्दु की भाँति चञ्चल होओगी। पात्र कुपात्र का विचार न करोगी।

शिवजी का जो परम प्रिय वृक्ष विल्व है। उससे तुम्हारी उत्पत्ति होगी। वह वृक्ष ही तुम्हारी योनि होगा। वह विल्व वृक्ष सर्वश्रेष्ठ होगा, उसके पुष्प सर्वोत्तम होंगे। देवताओं का आहार होगा और अत्यन्त ही मनोरम होगा।"

सो भृगुजी की लक्ष्मी धेनु के गोबर से विल्व वृक्ष हुआ और उसी वृक्ष से श्री जी उत्पन्न हुई। इसीलिये विल्व को श्री फल कहते हैं। विल्व की उत्पति का एक मत तो यह हुआ। बृहद् धर्म पुराण में विल्व की उत्पत्ति की दूसरी ही कथा है। उसमें बताया है कि भगवती श्रीजी ने भगवान् शङ्कर की आराधना करते हुए घोर तपस्या की। यहाँ तक कि उन्होंने अपना बायाँ स्तन काटकर शिवजी पर चढ़ा दिया। जब दायें स्तन को भी काटने को उद्यत हुई तब शिवजी तुरन्त प्रकट हो गये और प्रकट होकर व्यग्रता के साथ कहने लगे—अरी, माताजी! यह तुम क्या करती हो। तुम तो समुद्रतनया हो, अब तुम अपने दायें

स्तन को मत काटो। तुमने जो अपना वायाँ स्तन काटकर चढ़ाया है, वह फिर से ज्यों-का-त्यों हो जायगा। मैं तुम्हारी अत्यन्त पवित्र महती भक्ति को जान गया। तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा। तुमने जो मेरे शिवलिङ्ग के ऊपर अपना वायाँ स्तन काटकर चढ़ाया है, उसी से परमपावन विल्व वृक्ष उत्पन्न होगा। संसार में वह तुम्हारे नाम से श्रीफल के नाम से प्रसिद्ध होगा। वह वृक्ष तुम्हारी मूर्तिमान् भक्ति का प्रतीक होगा। जब तक पृथ्वीपर सूर्य, चन्द्रमा स्थित रहेंगे तब तक वह तुम्हारी कीर्ति को फैलाता रहेगा। वह वृक्ष मुझे तथा लक्ष्मी को परम प्रिय होगा। उस विल्व वृक्ष के पत्रों से मेरी पूजा होगी जितने भी सोने के, मुक्ता–मोती–के, प्रवाल–मूँगा–के तथा और भी जितने पुष्प हैं श्रीफल–बेलपत्र–की पूजा उनसे करोड़ों गुनी श्रेष्ठ मानी जायगी। जैसे गङ्गाजल मुझे अत्यन्त प्रिय है, उसी प्रकार श्रीफल विल्व भी मुझे अत्यन्त प्रिय होगा। उसके तीन दल वाले पत्र मुझे सबसे अधिक प्रिय होंगे।" ऐसा कहकर शिवजी अन्तर्धान हो गये। तब कपाल मोचन तीर्थ में विल्व का वृक्ष उत्पन्न हो गया।

विल्व वृक्ष की उत्पत्ति किस दिन हुई ? इस सम्बन्ध की कथा बृहद् धर्मपुराण में इस प्रकार बतायी है—वैशाख शुक्ल पक्ष की तृतीया को यह श्रीफल विल्व वृक्ष उत्पन्न हुआ। भगवती देवी कह रही हैं—जिस समय यह विल्व वृक्ष उत्पन्न हुआ और इसकी उत्पत्ति का समाचार ज्यों ही फैला, त्यों ही इन्द्र के सहित समस्त देवतागण, ब्रह्माजी, भगवान् श्रीमन्नारायण तथा समस्त देवताओं की पत्नियाँ वहाँ आकर उपस्थित हो गयीं। उन सबने आकर क्या देखा कि वहाँ पर बड़ा स्निग्ध–चिकना–वृक्ष उत्पन्न हुआ है। उसके पत्र बड़े ही सुन्दर कोमल-कोमल तीन दल वाले हैं। वह अपने तेज से दशों दिशाओं को दीप्तिवान् बनाये हुए है। वह वृक्ष साक्षात् शिव रूप ही है और कल्याण को प्रदान

करने वाला है। सब देवताओं ने उस परम पावन वृक्ष को प्रणाम किया। उसे सुन्दर सलिल से सींचा और सुखपूर्वक उसकी सघन शीतल छाया में निवास किया।

जब सब सुरगण सुखपूर्वक बैठ गये तब भगवान् विष्णु बोले—"देखो, भाई! इस वृक्ष का नाम विल्व है। इस नाम के अतिरिक्त इस वृक्ष के बीस नाम और भी हैं। उन्हें भी मैं बताता हूँ, आप लोग ध्यान पूर्वक सुनें। विल्व के सहित इसके ये इक्कीस नाम हैं। (१) विल्व, (२) मालूर, (३) श्रीफल, (४) शाण्डिल्य, (५) शैलूष, (६) शिव, (७) पुण्य, (८) शिवप्रिय, (९) देवावास, (१०) तीर्थपद, (११) पापघ्न, (१२) कोमलच्छद, (१३) जय, (१४) विजय, (१५) विष्णु, (१६) त्रिनयन, (१७) वर, (१८) धूम्राक्ष, (१९) शुक्लवर्ण, (२०) संयमी और (२१) श्राद्धदेवक। इस प्रकार यह समस्त वृक्षों में सर्वश्रेष्ठ विल्व वृक्ष इक्कीस नामों को धारण करता है। इस वृक्ष की जड़ से लेकर सौ धनुष तक और इतने ही ऊँचे आकाश में तीर्थ माना जाता है। और इतने ही धनुष पृथ्वी में नीचे तक। इस प्रकार ऊपर नीचे तथा पृथ्वी पर इसके आस-पास तीनों स्थानों में तीर्थ माना गया है। इसके पत्तों में जो त्रिदल होते हैं। उनमें बीच का कुछ बड़ा आस-पास के दो कुछ छोटे-छोटे होते हैं। उनमें से जो बीच का बड़ा पत्ता है, वह तो शिवजी का रूप है। बायीं ओर का ब्रह्माजी का रूप है और दायीं ओर का मुझ विष्णु का रूप है। इस प्रकार इसका त्रिदल पत्र त्रिदेवमय है। इसकी छाया को तथा इसके पत्रों को लाँघना नहीं चाहिये। जो इसे लाँघता है उसकी आयु का क्षय होता है और जो इसे पैर से छूता है उसकी लक्ष्मी नष्ट हो जाती है। इसके फल या पत्र सहस्र कमल के पुष्पों के सदृश हैं इसके १—दर्शन के समय, २—नमस्कार के समय, ३—स्पर्श करने के समय, ४—इसके नीचे सम्मार्जन—बुहारी देते-समय—५—पूजन के

समय, और ६–तोड़ने के समय क्रम से इन मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिये।

१ दर्शन के समय—

१—हे महाभाग विल्व वृक्ष ! आप शिवजी को सदा प्रिय हो। हे समुद्र पुत्री लक्ष्मीजी के स्तन से उत्पन्न होने वाले देव ! आप शिव दर्शन की ज्योति स्वरूप हो। आप मेरे ऊपर प्रसन्न होवें।" इस मन्त्र से प्रफुल्लनेत्र वाला पुरुष विल्व वृक्ष का दर्शन करे तदनन्तर उसे नीचे के मन्त्र से नमस्कार करे।

२ नमस्कार करने का मन्त्र—

ॐ विल्व वृक्ष के लिये नमस्कार है। आप सदा शङ्कर स्वरूप हैं। हे शिवजी को हर्ष प्रदान करने वाले ! मेरे समस्त अङ्गों को सफल कीजिये।" ऐसा कहकर मालूर नाम वाले विल्व वृक्ष को साष्टाङ्ग नमस्कार करे। भगवान् कह रहे हैं इस प्रकार नमस्कार करने वाला मेरा भक्त सच्चा वैष्णव है। और मेरा अत्यन्त प्यारा है।

३ स्पर्श करने का मन्त्र—

"हे शिवजी की पूजा करने वाले मालूर नामक विल्वदेव ! आप महान् वृक्ष हैं। आपका स्पर्श महान् प्रिय है। मैं आपका

---

१. दर्शन मन्त्र—विल्ववृक्ष महाभाग महेशस्य सदाप्रियः।
शिवदर्शनकज्योतिः प्रसीदाब्धिसुतास्तन !

२. नमस्कार मन्त्र—ॐनमो विल्वतरवे सदाशङ्कररूपिणे।
सफलानिममाङ्गानि कुरुष्व शिवहर्षद !

३. स्पर्श करने का मन्त्र—शिवपूजक मालूर ! प्रियस्पर्श महातरो।
स्पृशामि त्वां महापापसञ्चयान् मे प्रणाशय ॥

स्पर्श करता हूँ। आप मेरे महान् पापों के समूहों को भली प्रकार नाश कर दीजिये।" ऐसा कहकर विल्व वृत्त का स्पर्श करे।

४ विल्व के नीचे बुहारी देने का मन्त्र—

"हे देवताओं के वृत्तों में उत्तम से भी उत्तम श्रेष्ठ वृत्त! आपका जो स्थान है, वह अत्यन्त ही मनोहर है। आपके नीचे आकर देवतागण क्रीड़ा किया करते हैं। इसलिये मैं आपके नीचे मार्जनी देता हूँ, आपके स्थान को झाड़ता बुहारता हूँ। आप मेरे ऊपर प्रसन्न हों।" ऐसा कहकर विल्व वृत्त के नीचे १० हाथ तक झाड़ू दे। और प्रातःकाल पानी गोबर से जो उसके नीचे लीपता है वह वैष्णव है।

५ पूजन का मन्त्र—

"ॐ द्रुमाय श्रीफलाय नमः" इस दश अत्तर वाले मन्त्र से विल्व वृत्त की पूजा करनी चाहिये और अपनी शक्ति अनुसार इस दशात्तर मन्त्र का जप भी करना चाहिये।"

६ विल्वपत्र तोड़ने का मन्त्र—

"हे पुण्य वृत्त! हे महाभाग! हे प्रभो! आपका नाम मालूर तथा श्रीफल भी है। भगवान् शिवजी की पूजा के निमित्त मैं आपके पत्रों को तोड़ता हूँ।" इस मन्त्र से भक्तिभाव के सहित पत्रों को तोड़े। अमावास्या, पूर्णिमा द्वादशी तथा सायंकाल में विल्व पत्रों को नहीं तोड़ना चाहिये। विल्व वृत्त में न तो चढ़ना

---

४. बुहारी देने का मन्त्र—देववृक्षवरश्रेष्ठ स्थानन्ते सुमनोहरम्।
क्रीडन्त्यागत्य विबुधा मार्ज्जये तत् प्रसीदमे॥

५. पूजन का मन्त्र—ॐद्रूमाय श्रीफलाय नमो दशभिरक्षरैः।
मन्त्रेण पूजयेत् विल्वं जपेत् शक्तिक्रमात्तथा॥

६. पत्र तोड़ने का मन्त्र—पुण्यवृक्ष महाभाग मालूर श्रीफलप्रभो!
महेशपूजनार्थाय तत् पत्राणि चिनोम्यहम्॥

चाहिये न शाखाओं को तोड़ना चाहिये। विल्व पत्र ६ महीने तक वासी नहीं होता।

इस प्रकार भिन्न-भिन्न पुराणों में भिन्न-भिन्न तन्त्रों में विल्व वृत्त की अनेक कथायें हैं। आगे हम कुछ कथायें विल्व वृत्त के माहात्म्य में कहेंगे।

छप्पय

विल्व नाम इक्कीस १–विल्व, २–मालूर, ३–तीर्थपद।
४-श्रीफल, ५-वर, ६-शांडिल्य, ७-शिवप्रिय, ८-कोमलच्छद॥
९नवमों शिव १०शैलूष ११पुण्य १२पापघ्न १३विष्णु १४जय।
१५-शुक्लवर्ण, १६-धूम्राक्ष, १७-संयमी, १८-देवावासय॥
कहें १९-श्राद्धदेवक तथा २०-विजय २१-त्रिनेत्रहु नाम हैं।
सब वृत्तनिमें श्रेष्ठ ये, सुखप्रद इनके काम हैं॥



विल्व-माहात्म्य

[३]

विल्ववृक्षं तथा देवि भगवान् शङ्कर स्वयम् ।
विल्ववृक्षतले स्थित्वा यदि प्राणांस्त्यजेत् सुधीः ॥
तत्क्षणान्मोक्षमाप्नोति किन्तस्य तीर्थ कोटिभिः ।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तिष्ठन्ति शक्तिहेतवे ॥*

(पुरश्चरणासोल्लासे)

छप्पय

विल्व सरिस तरु नहीं पुन्यप्रद अरु गुनकारी ।
शङ्कर मन्दिर निकट बहैं गङ्गा अघहारी ॥
तीनिहु को संयोग होय काशी सम सो थल ।
विल्वपत्र शिवपूजि चढ़ावैं नर गङ्गाजल ॥
विल्व वृक्षकी छाँहमें, प्रान त्याग जे नर करैं ।
अवसि पाइँ ते परम पद, फेरि नहीं जग तनु धरैं ॥

सनातन वैदिक आर्य धर्म के अनुसार यह विश्व ब्रह्माण्ड भगवान् का शरीर है । हरि ही जगत् रूप में परिणत हो गये हैं ।

---

* हे देवि ! विल्ववृक्ष तो स्वयं साक्षात् शङ्कर का ही स्वरूप है । यदि विल्ववृक्ष के नीचे बैठकर जो सुधी प्राणों का परित्याग करता है, वह तत्क्षण मोक्ष को प्राप्त होता है । फिर करोड़ों तीर्थों से क्या लेना है, जिस विल्ववृक्ष के नीचे शक्ति प्राप्त करने के निमित्त ब्रह्मादिक देवता आकर बैठते हैं ।

समस्त संसार सियाराममय है। अन्य सम्प्रदाय वाले कहते हैं—जब तक आप हमारे समाज में सम्मिलित न होंगे, हमारी मान्यताओं को न मानेंगे, तब तक तुम्हारा कल्याण नहीं तब तक तुम्हें स्वर्ग की प्राप्ति नहीं हो सकती। इसलिये वे अपने समाज में मिलाने का सब उपायों से प्रयत्न करते हैं, जो उनकी मान्यताओं को नहीं मानते उनसे द्वेष करते हैं, उन्हें भला-बुरा कहते हैं। वैदिक धर्म ऐसा नहीं कहता वहाँ का सिद्धान्त है, तुम जहाँ हो, वहीं रहकर सत्याचरण—सदाचार—के सहित जिस प्रकार से चाहो सत्यता के साथ उपासना करो। तुम्हारा कल्याण होगा।

कुछ लोग कहते हैं—भगवान् तो निराकार है वह साकार हो ही नहीं सकता। कुछ कहते हैं भगवान् का अवतार नहीं हो सकता। अरे, भैया! तुम भगवान् को अपने नियमों में क्यों बाँधना चाहते हो? वे तो कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुम् समर्थ हैं। वे विरुद्धधर्माश्रयी हैं। वे निराकार भी हैं साकार भी हैं। उन्हें तुम अपनी श्रेणी में क्यों घसीटते हो।

तुम इस संसार में सर्वव्यापक प्रभु को देखो, भागवतकार ने तो इस विश्व ब्रह्माण्ड को ही भगवान् का स्वरूप बताया है। उनका कहना है—ब्रह्माण्ड ही उनका शरीर है। पाताल उनके पैर के तलवे हैं। रसातल उनके एड़िया और पंजे हैं। गुल्फें महातल, पिंडुरियाँ तलातल, घुटने सुतल, अतल वितल जाघें, भूतल पेड़ू हैं। नाभि आकाश, छाती स्वर्ग, महर्लोक गला, मुख जनलोक, ललाट तपलोक, मस्तक सत्यलोक है। इन्द्रादिदेव बाहुएँ, दशों दिशा कान, श्रवणेन्द्रिय, शब्द, नासिका छिद्र अश्विनीकुमार, गन्ध घ्राणेन्द्रिय, अग्नि मुख, अन्तरिक्ष नेत्र, दर्शन शक्ति सूर्य, पलकें रात्रि दिन, भ्रूविलाश ब्रह्मलोक, जल तालु, रस जिह्वा, वेद ब्रह्मरन्ध्र, दाढ़े यमराज, स्निग्धता दाँत, मुसकान माया, लज्जा और लोभ दोनों होठ, धर्म स्तन, अधर्म पीठ,

प्रजापति शिश्न, मित्रावरुण अण्डकोश, समुद्र उनकी कोख हैं। पर्वत हड्डियाँ, समस्त वृक्ष उनके शरीर के रोम हैं, वायु श्वास, नदियाँ उनकी नस नाड़ियाँ हैं। काल उनकी चाल है। गुणचक्र कर्म, बादल केश हैं, सन्ध्या उनके शरीर का वस्त्र है, प्रकृति हृदय, मन चन्द्रमा, महत्तत्व चित्त है। रुद्र अहङ्कार, घोड़े, खच्चर, ऊँट तथा हाथी आदि उनके नख हैं, वन्य पशु मृगादि उनका कटि प्रदेश हैं। पक्षी रचना कौशल, मनु बुद्धि हैं। मनुष्य निवास स्थान, गन्धर्व, विद्याधर, चारण तथा अप्सरायें षडजादि सप्त स्वर हैं। दैत्य वीर्य, विप्र मुख, क्षत्रिय बाहु, वैश्य जङ्घा, शूद्र चरण, यज्ञ कर्म हैं। यह सम्पूर्ण विश्व विराट् उनका स्थूल शरीर ही है। जैसे स्वप्न देखने वाला स्वप्न के समय अपने ही भीतर विविध वस्तुओं को देखता है। वैसे ही सर्वान्तर्यामी भगवान् जो सबकी बुद्धि वृत्तियों द्वारा सब कुछ अनुभव करने वाला है वह एक ही है।× इसलिये भगवान् के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। अन्य किसी भी वस्तु में आसक्ति नहीं करनी चाहिये। क्योंकि उनके अतिरिक्त कुछ देखना अधःपतन है।×

जब सब कुछ भगवान् ही भगवान् हैं तो फिर विरोध किससे किया जाय ? भला-बुरा किसे बताया जाय ? किसकी पूजा न की जाय ? वृक्ष, लता काष्ठ, पाषाण जो भी कुछ है भगवान् का ही रूप है। इसीलिये प्रह्लाद ने कहा था, मेरा प्रभु मुझमें तुझमें खड् में खम्भ में सब में है और उन्होंने अपनी भावना से खम्भ में से भगवान् को प्रकट करके दिखा दिया। इसलिये नदी में, वृक्ष में, प्रतिमा में जहाँ भी भगवत् बुद्धि करोगे वहीं भगवान्

× स सर्वधीवृत्त्यनुभूतसर्व आत्मा यथा स्वप्नजनेक्षितैकः।
तं सत्यमानन्दनिधिं भजेत नान्यत्र सज्जेत् यत आत्मपातः॥
(श्री० भा० २ स्क० १ अ० ३९ श्लो०)

प्रकट हो जायँगे। इसलिये योगेश्वर कवि ने महाराज विदेह को उपदेश करते हुए कहा है—"राजन्! यह आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, ग्रह-नक्षत्र, समस्त प्राणधारी, दिशायें, वृक्ष, वनस्पति, नदी, समुद्र, सबके सब भगवान् के स्वरूप हैं, उनके शरीर हैं। सभी रूपों में स्वयं भगवान् ही प्रकट हो रहे हैं। ऐसा जानकर भगवत्भक्त के सम्मुख जो भी आ जाता है, वह चाहे प्राणी हो या अप्राणी कोई भी क्यों न हो, भक्त उसे अनन्य भाव से भगवान् का भाव मानकर भगवत् बुद्धि से उसे प्रणाम करता है।×

विल्ववृक्ष में भगवत् बुद्धि करने की पुराणों में तन्त्र ग्रन्थों में अनेक प्रकार की कथायें हैं। उन कथाओं का सार यही है कि विल्ववृक्ष शिवजी का ही स्वरूप है और यह श्री लक्ष्मीजी का वृक्ष है। योगिनी तंत्र में शिव पार्वती सम्वाद है। उसमें पार्वतीजी ने शिवजी से पूछा—"भगवन्! भगवान् विष्णु की पत्नी श्री देवी विल्ववृक्ष क्यों बन गयीं? वे लक्ष्मीजी तो ज्योतिस्वरूपा हैं, मेरी अंशभूता हैं ब्रह्मादि देवों द्वारा प्रार्थित हैं।

शिवजी ने कहा—"देखो, देवि! ये जो वाणी की अधिष्ठातृ देवी सरस्वती हैं, वे मेरे अनुग्रह से सर्वप्रिया बन गयीं। भगवान् विष्णु की तो वे अत्यन्त ही प्रिया हो गयीं। जितनी प्रीति भगवान् विष्णु की सरस्वतीजी में हैं, उतनी प्रीति मुझ लक्ष्मी में नहीं है। ऐसी चिन्ता लक्ष्मीजी को हो गयी। वे विष्णु की अत्यन्त प्रिया बनने की लालसा से तपस्या करने के निमित्त श्री शैल मन्दिर

× खं वायुमग्निं सलिलं महीं च
ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन्।
सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरम्
यत् किञ्च भूतं प्रणमेदनन्यः॥
(श्री० भा० ११ स्क० २ अ० ४१ श्लो०)

में गयीं। वहाँ एकान्त में मेरी लिङ्ग को प्राप्त करके घोर दारुण तपस्या करने लगीं। तो भी उन पर मेरी कृपा नहीं हुई। तब वे विल्ववृक्ष का रूप धारण करके वहाँ स्थित हो गयीं और अपने पत्रों से, पुष्पों से तथा फलों से निरन्तर मेरी पूजा करने लगीं।

हे देवि ! इस प्रकार उन्होंने एक करोड़ वर्षों तक विल्ववृक्ष के रूप में मेरी आराधना की। तब मैंने उनके ऊपर अनुग्रह की। उसी अनुग्रह का यह परिणाम हुआ कि वे विष्णु की अत्यन्त प्यारी वल्लभा बनीं। सदा श्रीविष्णु के वक्षःस्थल का हार बन गयीं। इसलिये वे सदैव ब्राह्मणों की प्रिय बनीं इसी कारण इस रूप से वे हरिप्रिया कहलायीं विल्व रूप से वे सदा मेरी पूजा में तत्पर रहती हैं। इसलिये मैं भी विल्ववृक्ष का आश्रय लेकर रात्रि-दिन विल्ववृक्ष में रहता हूँ। यह विल्ववृक्ष सम्पूर्ण तीर्थ स्वरूप है तथा सर्वदेवमय है। इसमें किसी भी प्रकार का संशय नहीं है।

विल्ववृक्ष के फलों द्वारा उसके पुष्पों द्वारा तथा उसके पत्तों द्वारा मेरी पूजा करनी चाहिये। विल्ववृक्ष की लकड़ी को चन्दन की भाँति घिसकर जो लगाता है वह मेरा अत्यन्त प्रिय भक्त है। जो विल्व के काष्ठ का चन्दन लगाता है उसको शिव स्वरूप मानकर श्री देवी सदा नमस्कार करती हैं। इसलिये किसी को विल्व काष्ठ चन्दन धारण नहीं करना चाहिये और उसके पत्र तथा पुष्प को भी अपने शिर पर कभी धारण न करते रहना चाहिये। जो विल्ववृक्ष के नीचे अपने प्राणों का परित्याग करता है, वह रुद्र रूप ही हो जाता है, चाहें वह कैसा भी पापी से पापी क्यों न हो ?"

यही बात पुरश्चरणरसोल्लास के दशवें पटल में शङ्करजी ने पार्वतीजी से इस प्रकार कही है। शिवजी कहते हैं—"हे देवि ! विल्ववृक्ष स्वयं शङ्कर स्वरूप है। जो विल्ववृक्ष के नीचे अपने प्राणों

का परित्याग करता है। उसको उसी क्षण मोक्ष की प्राप्ति होती है, फिर करोड़ों तीर्थों के सेवन से क्या लाभ ? जिस विल्ववृक्ष के नीचे शक्ति प्राप्त करने के निमित्त ब्रह्मादि देवता सदा निवास करते हैं। विल्ववृक्ष के नीचे का स्थान यदि बिष्ठादि से भी पूरित हो, तो भी उसे शङ्कर का क्षेत्र ही मानना चाहिये। वह स्थान तो सर्वतीर्थमय है। विल्ववृक्ष के नीचे का स्थान सर्वपीठमय और सर्वदेवमय है। शङ्कर के मन्दिर को, श्री गङ्गाजी को और उसके समीप यदि विल्ववृक्ष भी हो उसे कभी भी नहीं छोड़ना चाहिये। क्योंकि जहाँ ये तीनों हों, वह तो काशीवास के सदृश स्थान है। ऐसे स्थान पर जो प्राणों का परित्याग करता है, उसे काशीवास की तथा करोड़ों तीर्थों की यात्रा की क्या आवश्यकता है ?

विल्वपत्र की महिमा—

शिवजी स्वयं कहते हैं—"हे देवि ! मैं तीन दल वाले विल्व-पत्र का रहस्य बताता हूँ। यह विल्वपत्र ब्रह्ममय है तथा अत्यन्त ही अद्भुत है। यह जो श्रीनिकेतन श्रीफल विल्व है, यह प्रथम श्री शैल पर उत्पन्न हुआ था। यह भगवान् विष्णु के लिये भी प्रीतिकर है और मेरे लिये भी अत्यन्त प्रीतिकर है। इसके त्रिदलों में ब्रह्मा, विष्णु और महेश ये तीनों देवता निवास करते हैं। इसके वृन्त में–पत्ते के डण्ठल में–शक्ति का निवास है। इसीलिये विल्व पत्र का डण्ठल वज्र रूप है। इसलिये डण्ठल को तोड़कर विल्वपत्र को हरिहर पर चढ़ाना चाहिये। यदि पत्र, पुष्प, फल, जल, नैवेद्य तथा धूप दीप के सहित शिवजी की पूजा करे, तो उसका कोटि गुणा फल होता है और कुछ न हो तो केवल एक विल्वपत्र ही चढ़ा दे, तो उसी से मैं तथा विष्णु प्रसन्न हो जाते हैं। इसलिये देवि तुम विल्वपत्र का डण्ठल तोड़कर उसे चढ़ाओ तो मनोवांछित फल को प्राप्त कर सकोगी। जो डण्ठल के सहित विल्वपत्र को चढ़ाता है उसकी निश्चय ही वज्राघात से मृत्यु हो

जाती है। इसलिये साधक को डण्ठल तोड़कर ही बेल पत्र को चढ़ाना चाहिये। यात्रा काल में जाते समय जो विल्वपत्र को सूँघकर यात्रा करता है, उसे सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है।

विल्वपत्र के ऊपरी भाग की सुदर्शन रक्षा करते हैं, नीचे की पशुपति। आगे की महेश्वर, पीछे की त्रिशूल धारिणी। दायें ओर की श्रीनाथ, बायें ओर की प्रजापति रक्षा करते हैं सूर्य चन्द्रमा छाता लगाते हैं और मैं हाथ पैर की रक्षा करता हूँ। यह कथा ज्ञान भैरव तन्त्र के छटे पटल की है।

मातृका तन्त्र के ५५ पटल में बताया है कि पत्र, पुष्प तथा फल इनको अधोमुख नहीं चढ़ाना चाहिये। जैसे उत्पन्न हुए हों वैसे ही चढ़ाना चाहिये। किन्तु विल्व पत्रों को तो अधोमुख करके ही चढ़ाने का विधान है। शिवजी तथा विष्णु भगवान् पर विल्व पत्र चढ़ाने का अत्यन्त माहात्म्य है। केवल गणेशजी और सूर्य को विल्व पत्र नहीं चढ़ाना चाहिये।×

इस प्रकार पुराण तथा तन्त्र ग्रन्थों आदि में विल्व का विल्व पत्रों का अनन्त माहात्म्य धार्मिक दृष्टि से विल्ववृक्ष परम पवित्र माना जाता है। शिवजी का स्वरूप ही है किन्तु इसे तो वे ही लोग मानेंगे, जो धार्मिक हैं, जिनकी शास्त्र वचनों पर श्रद्धा है, जो सर्वत्र भगवान् को व्याप्त मानकर प्रेम से प्रत्येक स्थान पर उन्हें प्रकट होने पर विश्वास करते हैं। जो भगवान् के साकार स्वरूप में श्रद्धा नहीं रखते, वेद शास्त्रों को नहीं मानते, जिनके हृदय में प्रेम नहीं, भक्ति नहीं उपासना नहीं वे तो विल्ववृक्ष को अन्य साधारण वृक्षों की भाँति मानते हैं। उनके लिये हमने यह लिखा भी नहीं। धार्मिक वृत्ति वाले आस्तिक व्यक्तियों के लिये

× पूज्या एतेन वै देवा : सूर्य लम्बोदरौ बिना।
विल्व वृक्षवनं यत्र सा तु वाराणसी पुरी॥

ही हमने धार्मिक दृष्टि से विल्व का माहात्म्य बताया है। आगे हम आयुर्वेदिक दृष्टि से विल्व महिमा बतावेंगे। उसे तो चाहें आस्तिक हो या नास्तिक सभी मानेंगे। आयुर्वेद शास्त्र तो प्रत्यक्ष शास्त्र है। जो शरीरधारी प्राणी हैं, उन सबको रोग होता है, क्योंकि शरीर व्याधियों का–रोगों का–मन्दिर है–घर है। ओषधि खाने से आस्तिक नास्तिक सभी को लाभ होता है। अतः अब हम औषधि रूप से शास्त्रीय दृष्टि से विल्व का तथा अपने प्रत्यक्ष के अनुभवों से विल्व की महिमा बतायेंगे। पाठक इनका स्वयं अनुभव करें, तथा अपने सम्बन्धियों को करावें। इतना कहकर धार्मिक दृष्टि से विल्व के माहात्म्य को समाप्त करते हैं। बृहद्धर्मपुराण में लिखा है—

कथितोऽयं मया सख्यौ विल्ववृक्षस्तरूत्तमः ॥

मैंने यह समस्त वृक्षों में सर्वश्रेष्ठ विल्ववृक्ष का माहात्म्य कहा। इसके सुनने के फल को बताते हुए कहते हैं—

अयं वां सम्प्रोक्तः शिवतरु कथा पुण्य निचयः।
पवित्रः श्रोतव्यः श्रवणरमणीयः खलु सताम् ॥
शिवे विष्णौ भेदापहरण उदारः सुमनसाम्।
सुसेव्यः सम्पाद्यः प्रभवति शिवस्यापि निकटः ॥*

---

* पार्वतीजी कह रही हैं—"यह मैंने तुमसे पुण्यों के समूह वाली शिवतरु–विल्ववृक्ष–के माहात्म्य की कथा कही। यह कथा परम पवित्र है, यह सुनने में परम रमणीय है अतः इसे सज्जनों को सुनना ही चाहिये। जो अच्छे मन वाले उदार पुरुष हैं उनके लिये यह कथा शिव और विष्णु में भेद-भाव को अपहरण करने वाली है। जो शिव वृक्ष विल्व का सेवन करते हैं तथा सम्पादन करते हैं, वे शिव सानिद्ध को प्राप्त होते हैं।

छप्पय

शिवतरु जो है विल्व पुण्यप्रद परम सुहावन।
श्रीतप ही साकार विष्णु–शिव–श्री मनभावन॥
जाकूँ जे नित सेयँ होयँ तिनि परम प्रकाशक।
छाया शीतल सुखद, पत्र फल दुःख विनाशक॥
लोक और परलोकमें, सत सुख सरसावत सतत।
हर शिर पत्र चढ़ाय पुनि, फल चखि होवै मन मुदित॥



आयुर्वेदिक दृष्टि से

विल्व-परिचय

[४]

विल्वस्तु मधुरो हृद्यः कषायोष्णोरुचिप्रदः ।
दीपनोग्राहको रूक्षः पित्तलस्तिक्तः कटुः ।।
गुरुः पाचन कर्त्ता च वातातीसार ज्वरहा ।*

(शा० नि० गु० वा०)

छप्पय

बेल स्वादमें मधुर हियेकूँ अति हितकारी।
दीपन, ग्राही, रूक्ष, उष्ण कड़वो रुचिकारी ।।
पाचक, भारी और चरपरो पित्त बढ़ावै।
कछू कषेलो लगे प्रेमतैं जो नर खावै ।।
बात रोग नाशक परम, संग्रहणी अतिसारमें।
ज्वर नाशक हितकर परम, उपयोगी है अर्श में ।।

जीव चार प्रकार के होते हैं। (१) जरायुज, (२) अंडज (३) स्वेदज और (४) उद्भिज। जरायुज तो वे हैं, जो जरा-

---

* बेल का फल स्वाद में मीठा, हृदय के लिये हितकारी, कषेला, उष्ण, रुचिकारक, दीपन—भूख को बढ़ाने वाला—ग्राही, रूखा, पित्तकारक, कुछ कड़वा, चरपरा, भारी पाचक वातरोगों को अतिसार आदि रोगों को नाश करने वाला तथा ज्वर नाशक है।

झिल्ली से लिपटे पैदा हों जैसे मनुष्य, पशु आदि। अंडज वे जो अंडे से पैदा हों जैसे कबूतर, मोर आदि समस्त पक्षी सर्पादि। स्वेदज वे जो पसीने से पैदा हों जैसे जूँआ आदि। उद्भिज वे जो पृथ्वी को फोड़कर निकलें जैसे वृक्षादि। वृक्ष भी जीव हैं, वे भी बढ़ते हैं, दुखी-सुखी होते हैं फलते-फूलते हैं जन्मते और मरते हैं। परन्तु स्वयं कहीं जा नहीं सकते। मनुष्य जो अपने को सब से अधिक बुद्धिमान मानता है, वह तो काम, क्रोध, लोभ, अहंकार तथा मोहादि के कारण स्वार्थ परायण हो जाता है। वह अपना ही हित चाहता है। अपने को ही सुखी बनाये रहना चाहता है। बिना स्वार्थ के, बिना प्रयोजन के, बिना अपने लाभ के कोई काम करना नहीं चाहता। ऐसे स्वार्थी मनुष्यों से तो ये न बोलने वाले, न चलने वाले, वृक्ष ही अच्छे हैं। ये अपने लिये कुछ भी नहीं करते। जड़ में से सड़ी गली जो भी खाद मिल जाय अपने आप जैसा भी पानी मिल जाय, उसे ही खा पीकर सदा उपकार ही करते रहते हैं। इसीलिये श्रीमद्भागवत में वृक्षों की प्रशंसा करते हुए भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने सभी सखाओं से कहा—मेरे प्यारे मित्रो! देखो, ये वृक्ष कितने भाग्य-वान् हैं। इनका समस्त जीवन दूसरों की भलाई करने के ही लिये है। ये स्वयं तो वायु के झोंकों को, वर्षा के जल को, गर्मी में धूप को, जाड़ों में पालों के दुखों को स्वयं सहन करते हैं। किन्तु हम लोगों की उन विपत्तियों से रक्षा करते हैं। अहा! जीवन तो इन वृक्षों का ही सर्व श्रेष्ठ है। क्योंकि इनके द्वारा समस्त प्राणियों की उपजीविका चलती है, सभी का उपकार होता है। सभी का जीवन निर्वाह होता है। जैसे किसी सत्पुरुष के द्वार पर से कोई भी याचक रिक्तहस्त नहीं लौटता, उसी प्रकार इन वृक्षों से भी सभी को कुछ न कुछ मिलता ही है। ये अपने हरे तथा सूखे पत्तों से, फूलों से, फलों से, छाया से, जड़से,

छालसे, गीली सूखी लकड़ियों से, अपनी सुगन्ध से, गोंद से, राख से, कोयलों से, अंकुरों तथा कोपलों से–अपनी समस्त वस्तुओं से–लोगों की मनोकामनाओं को पूर्ण करते रहते हैं। देखो, भैया ! संसार में प्राणी तो बहुत हैं, किन्तु उन प्राणियों के जीवन की सफलता इसी में है कि जहाँ तक हो सके, अपनी जितनी सामर्थ्य हो, उसके अनुसार अपने धन से, अपनी बुद्धि विवेक से तथा अपनी वाणी से और कहाँ तक कहें अपने प्राणों से भी ऐसे ही कर्म करता रहे, जिनके द्वारा दूसरों का सदा उपकार होता रहे।×

विल्ववृक्ष की (१) छाया, (२) जड़, (३) छाल, (४) पत्र, (५) पुष्प, (६) फल, (७) लकड़ी यहाँ तक कि (८) काँटे भी रोगों को नष्ट करने में समर्थ हैं। भीतर तथा बाहर की दरिद्रता को नाश करने वाले तथा श्री–लक्ष्मी–ऐश्वर्य को प्रदान करने वाले हैं। ऐसे वृक्ष का परिचय पाना अत्यावश्यक है। अतः अब विल्व वृक्ष का आयुर्वेदिक दृष्टि से परिचय सुनिये।

बेलका वृक्ष बड़ा होता है। वट पीपरादि से छोटा। इसकी छाया परम शीतल सुखकर होती है। भारतवर्ष के प्रायः सभी स्थानों में पाया जाता है। जहाँ बहुत ठंड पड़ती है वहाँ नहीं होता। हम लोग केदारनाथ, अमरनाथ, कैलाश, मन्महेश्वर आदि हिमप्रधान शिवजी के दर्शन करने जाते हैं तो नीचे से ही बेल पत्र लेकर जाते हैं। जहाँ बरफ पड़ती है वहाँ यह नहीं होता। इसके पत्ते ६ महीने तक बासी नहीं माने जाते।

बेल के विविध नाम—

संस्कृत-साहित्य कोषो में बेल के बहुत से नाम हैं और वे

× एतावज्जन्मसाफल्यं देहिनामिह देहिषु।
प्राणैरर्थैर्धिया वाचा श्रेय एवाचरेत् सदा ॥
(श्री० भा० १० स्क० २२ अ० ३५ श्लो०)

सब सार्थक नाम हैं। जो कुछ नाम अब तक हमें प्राप्त हुए हैं, उनका विवरण नीचे देते हैं अमरकोष में विल्व के पाँच नाम आते हैं। (१) बिल्व, (२) शाण्डिल्य, (३) शैलूषी, (४) मालूर और (५) श्रीफल।+ रत्नमाल में पाँच नाम और हैं-(१) महाकपित्थ, (२) गौहरीतकी, (३) पूतिवातः, (४) अतिमङ्गल्य, (५) महाफल। इन दश नामों के अतरिक्त इतने नाम विल्व के और हैं, (११)-शल्य, (१२)-हृद्यगन्ध, (१३)-शालाटु, (१४) कर्कटाह्व, (१५) शैलपत्र, (१६) शिवेष्ट, (१७) पत्र श्रेष्ठ, (१८) त्रिपत्र, (१९) गन्धपत्र, (२०) दुराग्रह, (२१) त्रिशाखपत्र, (२२) लक्ष्मीपत्र, (२३) त्रिशिखा, (२४) शिवद्रुम, (२५) सदाफल, (२६) सत्यफल, (२७) सभूतिक, (२८) समीर सार।

इन २८ नामों के अतिरिक्त शालिग्राम निघण्टु में इतने नाम और दिये हैं। २९ कपीतन, ३० लक्ष्मीफल, ३१ गन्धफल, ३२ सुनीतिक, ३३ सत्यधर्म, ३४ अधरारुह, ३५ कण्टकाढ्य, ३६ सितानन, ३७ नीलमल्लिक, ३८ पीतफल, ३९ सोमहरीतकी। इस प्रकार ३९-४० नाम इसके मिलते हैं और भी अन्य कोषों में होंगे। ये सभी नाम सार्थक हैं। इसी से विल्व का महत्त्व जाना जा सकता है।

भारतवर्ष के अतिरिक्त वर्मा आदि में भी होता है। शालिग्राम निघण्टु में भिन्न-भिन्न भाषाओं में इससे नाम गिनाये हैं। जैसे संस्कृत में इसे विल्व कहते हैं। हिन्दी में बेल, बँगाली में भी बेल या विल्व। मराठी में बेल अथवा बेलफल, गुजराती में बिलोबिलु, कर्णाटकी में बेललु, तेलगु में मारेडीपदुबिल्व, तामिल में बिल्वपाझाम, अँगरेजी में बेगालं किन्स (BENGAL KINS) लेटिन भाषा में-इगलमार में लाफ्र (ARAGLE

+ विल्वे शाण्डिल्य शैलूषौ मालूर श्रीफलावपि। (अमर कोषे)

MARINELOS) इस प्रकार सभी भाषाओं में इसके नाम मिलते हैं।

बेल का वृक्ष न तो बट पीपल के समान बड़ा होता है न छोटा ही। साधारण मध्य वर्ग का वृक्ष होता है। इसमें लम्बे-तीक्ष्ण काँटें होते हैं। इसके पत्ते तीन दल वाले, कोई-कोई दो या पाँच दल के भी मिल जाते हैं। पेड़ का स्कन्ध खुरदरा होता है। इसकी छाया शीतल और सुखद होती है। औषधियों में इसका पंचाङ्ग या षडांग सभी काम में आते हैं। (१) जड़, (२) त्वचा या छाल, (३) पत्र, (४) पुष्प, और फल। यहाँ तक कि इसके काँटे और सूखी लकड़ी भी काम में आती है। अब हम इसकी एक-एक वस्तु का वर्णन करेंगे।

(१) पहिले तो इसकी छाया को ही लीजिये इसकी छाया शीतल, सुखद, स्वास्थवर्धक पवित्र और श्रीवर्धक है। बेल की छाया में बेल के नीचे बैठकर गायत्री के या अन्य मंत्रों के अनुष्ठान किये जाते हैं वे अन्य स्थानों की अपेक्षा सहस्र गुणे फलदायक होते हैं। वेल के नीचे बैठकर श्रीसूक्त के अंगन्यास, करन्यास तथा मुद्रादि दिखा कर पाठ करें और फिर श्रीसूक्त से ही विल्व की लकड़ियों से बेल के फलों को अथवा विल्वपत्रों को घृत में डुबाकर उनसे हवन करे तो निश्चय ही लक्ष्मी को प्राप्ति होती है।× बेल की छाया परम पवित्र मानी गयी है।

(२) बेल की जड़—बेल की जड़ मधुर, लघु, वमन को रोकने

× इस विषय का विशेष विवरण जानने के निमित्त हमारी लिखी सूक्तत्रय (पुरुष सूक्त, श्रीसूक्त और लक्ष्मी सूक्त) की पुस्तक देखें। जिसमें तीनों सूक्त अर्थ सहित तथा छप्पय सहित छपे हैं।

संकीर्तन भवन झूसी (प्रयाग)।

वाली तथा वात को हरने वाली है।÷ यह बहुत गहरी जाती है जड़ का रङ्ग कुछ पीला होता है, इसे चीरो तो पहिले तो सफेद दीखती है, किन्तु जब इसमें से पतला-सा रस निकलने लगता है तो वह कुछ ही काल में गाढ़ा हो जाता है और वह पीत वर्ण का हो जाता है। वेल की जड़ विभिन्न ओषधियों में काम आता है। च्यवनप्रास में बेल की जड़ डाली जाती है।

(३) बेल की छाल—आयुर्वेद की बहुत-सी ओषधियों में बेल की छाल का प्रयोग होता है। सुप्रसिद्ध दशमूल के काढ़े में १–शालवर्णी, २–पृष्ठपर्णी, ३–कटेहरी, ४–ऊँट कटेहरा, ५–गोखरू, ६–अरनी, ७–गम्भारी, ८–पाटल और वेल की छाल इसका प्रयोग है। यह दशमूल का काढ़ा स्त्री रोगों में प्रयोग किया जाता है। प्रसव के अनन्तर दिया जाता है और भी वहुत से रोगों में बेल की छाल का योग है।

(४) वेल के पत्ते—धार्मिक दृष्टि से तीन दल वाले वेल के पत्र परमपावन माने जाते हैं। शिवजी को तो ये अत्यन्त ही प्रिय है। ये तीन दल मानों सत्व, रज और तम तीनों गुणों के प्रतीक है। ये मानों शिवजी के तीन नेत्र ही है। और शिवजी के जो तीन आयुध हैं वे भी इसके प्रतीक है। ये तीनों जन्मों के पापों को संहार करने की शक्ति रखते हैं। ऐसे तीन दल वाले विल्वपत्र को मैं शिवजी पर चढ़ाता हूँ, शिवजी को अर्पण करता हूँ।× श्रावण मास में अनेक शिवभक्त विल्वपत्र पर अनार की लेखनी से चन्दन, लाल चन्दन से राम-राम लिखकर शिवजी को चढ़ाते हैं।

÷ विल्वमूलं तु छर्दिघ्न मधुरं लघु वातजम्। (सु० सू०)

× त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्र्यायुधम्।
त्रिजन्म पाप संहारं विल्वपत्रं शिवार्पणम्॥

आयुर्वेद की दृष्टि से बेल के पत्ते कफ, वात, आम और शूल को नाश करने वाले होते हैं। ये ग्राही और रोचक हैं।❀

बहुत से लोगों के श्वेद–पसीने–में बड़ी दुर्गन्ध आती है दूर से ही उनका शरीर गन्धाने लगता है, इसके लिये विल्वपत्रों का रस एकमात्र औषधि है। विल्वपत्रों को पहिले चटनी की भाँति पीस लें। फिर कांसे की कटोरी अच्छी प्रकार से दबाकर कांसे की थाली में उलटा करके चार प्रहर तक रख दे। फिर एक कटोरी में निकालकर कपड़े में छानकर निचोड़ ले। यही वेलपत्र का स्वरस हुआ। यह अनेक रोगों का नाश करने वाला स्वरस होता है।× गात्र की दुर्गन्ध को तो नाश करता ही है।÷ जीर्णज्वर, आमवात, आतों के आम तथा गाँठों की पीड़ा तथा फोड़ा आदि में बहुत ही उपयोगी है। मैंने स्वयं तो परीक्षा की नहीं किन्तु सुनते हैं विल्व के रस में यदि ताँवे को गलाकर मिला दें तो सुवर्ण बन जाता है। किन्तु बेलों के पत्रों का स्वरस बड़ी कठिनता से निकलता है। श्रावण भादौं में तो वर्षा के कारण पत्रों के भीग जाने से रस निकल भी आता है, किन्तु चैत्र वैशाख ज्येष्ठ की गर्मी के दिनों में रस निकालना

❀ पर्णानि ग्राहकाणिस्युर्वातनाशकराणि च (नि० र०)
तत्पत्रं कफवाताम शूलघ्नं ग्राहि रोचनम्।
विल्वपत्रं तु वावातानुत् (चरक सू० अ० २७)

× सुपूतं विल्वपत्रं तु कल्कवत् परिपेषयेत्।
संस्थाप्य कांस्यपात्रे तत् कांस्यपात्रेण रोधयेत्॥
चतुर्यामान्तरं सम्यक् पीडयेत् शुद्ध भाजने।
पतितं स्वरसं गृहणीयान्निर्जलं शिवम्॥
(न० प० प्र०)

÷ विल्वपत्र रसैवापि गात्र दौर्गन्ध्यनाशनः।

अत्यन्त कनिठ हो जाता है उस समय पत्रों को स्वच्छ करके उनकी धूल आदि को झाड़कर पानी के छींटे देकर रखना पड़ता है, तब कहीं जाकर थोड़ा निकलता है।

बेलपत्रों में लोहांश भी होता है। इसीलिये यह पूर्ण आहार भी है। बहुत से लोग केवल बेल के पत्ते ही खाकर वर्षों रहते हैं। पीसकर खाने में सुविधा होती है। इससे उदर के बहुत से रोग चले जाते हैं। शरीर में फोड़ा-फुंसी हो तो बेलपत्रों को पीसकर उन पर लगाते रहो घाव पर भी लगाने से घाव अच्छा हो जाता है। मुझे तो एक व्यक्ति ने बताया कि इसके सेवन से राजक्ष्मा (टी० बी०) भी चली जाती है। एक राजक्ष्मा के रोगी को सभी चिकित्सकों ने असाध्य कहकर छोड़ दिया। तब वह केवल बेलपत्र खाकर रहने लगा। वह सर्वथा स्वस्थ हो गया। पहिले से भी अच्छा उसका शरीर हो गया। जिन लोगों को गठिया हो, उनको गाँठों में बेल का तेल मलना चाहिये और नित्य बेल के पत्तों का रस शहद–मधु–के साथ खाना चाहिये निश्चय ही लाभ होगा। शरीर की दुर्गन्ध, फोड़ा-फुंसी की तो अमोघ ओषधि है। मुझे तो लोगों ने बताया उलटा फोड़ा जो दुस्साध्य और असाध्य बताया जाता है, वह भी विल्वपत्र भक्षण और विल्वपत्र के लेप से अच्छा हुआ है।

बहुत से लोगों की अपानवायु में बड़ी दुर्गन्ध होती है, वह भी बेलपत्र के स्वरस से तथा कच्चे बेल के चूर्ण से नष्ट हो जाती है। क्योंकि बेल के पत्ते आमवात तथा कफ के रोगों की एकमात्र ओषधि है। कोई रोग न भी हो तो भी नित्य बेलपत्र का या बेलपत्र के स्वरस का सेवन करे तो शरीर को बहुत लाभ होता है। बेल का पत्र भाँग की भाँति काली मिरच के साथ घोटकर पीवे तो भी स्वास्थ को अत्यन्त हितकर होता है।

जैसे देह दुर्गन्ध के लिये बेल के पत्तों का रस रामवाण

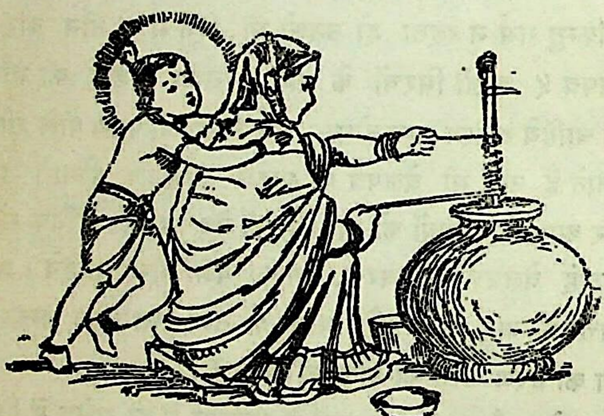
औषधि है।× उसी प्रकार स्त्रियों के रक्तस्राव को भी यह शीघ्र ही लाभ करता है। हमारे यहाँ अखण्ड कीर्तन के लिये दमोह से पं० शिवशङ्कर जी दीक्षित लगभग सौ व्यक्तियों को लेकर माघ में महीने भर को आये थे। उनकी पत्नी भी उनके साथ थीं। दिन रात्रि में उनकी पत्नी के अत्यधिक रक्तस्राव हुआ वे अत्यन्त घबड़ा गये। मेरे पास आये। मैंने ५ विल्वपत्र ५ काली मिरचें घोटकर ३-४ बार पीने को बताया। उन्होंने ४-५ बार पीया। रक्तस्राव बन्द हो गया। जिन स्त्रियों के मासिक धर्म तो होता हो, किन्तु गर्भ न रहता हो उनको भी दिन में दो तीन बार ५ विल्वपत्र ५ काली मिरचों के साथ पीसकर ठण्डाई की भाँति पीनी चाहिये अवश्य लाभ होगा। बालकों को जो पतले पीले शौच हो जाते हैं उन्हें भी बेलपत्र का स्वरस लाभ प्रद होगा। इस प्रकार आम के रोगियों को या जिनकी मेद बढ़ी हो अधिक मोटे हों, उन्हें बेलपत्तों का स्वरस, बेल का पन्ना पीना चाहिये। बेल के पत्तों में वायु, कफ और आम को तथा आमवात सम्बन्धी पीड़ा को हरण करने की अद्भुत शक्ति है।

हमने यहाँ तक बेल के पत्तों के सम्बन्ध में ही संक्षेप में विवेचन किया। अब आगे बेल के फूल, फल तथा काँटों के सम्बन्ध में आगे के अध्याय में बतावेंगे। पाठकगण इस विषय को सावधानी के साथ पढ़ने की कृपा करें।

× वासादलरसैर्लेपः शङ्खचूर्णावचूर्णितः।
विल्वपत्ररसोवापि गात्रदौर्गन्ध्यनाशनः॥
(वृहान्निघण्टुरत्नाकरे)

छप्पय

बिल्ववृत्तकी वस्तु सकल हैं रोग बिनासक।
छाया शीतल सघन मनोहर अति हितकारक॥
जाकी जड़ है मधुर पित्त कफ वात विनासै।
वमन शूल-हर, मूत्र कृच्छ्र रोगनिकूँ नासै॥
पत्ता ग्राही वातहर, आमवातकूँ हू हरें।
कफरिपु शूल मिटायके, नित सेवनतैं सुख करें॥



विल्व-फल

[५]

बालं विल्वं फलं ग्राहि दीपनं पाचनङ्कटु ।
कषायोष्णं लघु स्निग्धं तिक्तं वातकफापहम् ॥*

[माधव प्रकाशे]

छप्पय

बाल विल्व है स्निग्ध जठरकी अग्नि बढ़ावै ।
मलरोधक कटु गरम कषैलो शूल मिटावै ॥
आम वातको शत्रु अर्श अतिसार विनाशक ।
रुचिकारी कटुस्वाद बुद्धि, बल वीर्य प्रकाशक ॥
कच्चो खाओ भूनिकें, गुड़के संग मिलायकें ।
अथवा खाओ स्वादतैं, मुरबा मधुर बनायकें ॥

जीव काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, मद और मत्सर से युक्त मनुष्यों से प्रेम करता है, जो स्वार्थ के पुतले हैं। अपने स्वार्थ में जहाँ भी आघात हुआ, वहीं प्रेम, द्वेष के रूप में परिणित हो जाता है। ऐसे स्वार्थी लोगों से प्रेम करने से क्या लाभ ? वृक्षों से प्रेम करे जिनका समस्त जीवन, समस्त वस्तुएँ दूसरों के उपकार के लिये ही होती हैं। हरे भरे, फल पुष्पों से लदे हुये, चारों ओर अपनी सुबास फैलाते हुए, सुन्दर सुखद सघन छाया वाले वृक्षों को देखकर चित्त कितना प्रसन्न होता है, मन में कितना अधिक आह्लाद उत्पन्न होता है। इसीलिये श्रीमद्भागवत में महा-

---

* बेल का कच्चा फल ग्राहि, दीपन, पाचन तथा कड़वा होता है, कुछ कषाय, उष्ण, लघु, स्निग्ध, तीता, वात और कफ का नाश करने वाला भी होता है।

मुनि शुकदेवजी महाराज परीक्षित् से कह रहे हैं—राजन् ! भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी वन में वृक्षों के बीच में बैठकर बालकों से बातें कर रहे थे। उनके दोनों ओर सघन वृक्ष थे, वे वृक्ष नई-नई कोपलों से, फूलों के गुच्छों से, फलों से तथा पत्तों से लदे हुए थे। उनकी डालियाँ झुककर झूमकर पृथ्वी को चूम रही थीं। अपने सखाओं से बात करते हुए वे उन्हीं वृक्षों के बीच से यमुना तट पर गए। ×

हम पहिले ही बता चुके हैं विल्व का वृक्ष परम उपकारी है। इसकी सभी वस्तुएँ परम पवित्र और सबके काम में आने वाली तथा रोगों को नाश करने वाली है। हम पिछले अध्याय में विल्व की छाया, उसकी जड़, उसके वल्कल तथा पत्रों के सम्बन्ध में बता चुके हैं, अब फूल, फल, बीज, काँटे तथा काष्ठादि के सम्बन्ध में सुनिये।

बेल के पुराने पत्ते चैत्र बैशाख तक सब झड़ जाते हैं। उस समय उनमें केवल फल ही दिखाई देते हैं। प्रायः वैशाख में बड़े फल वाले वृक्षों के सब फल तोड़कर रख लेते हैं, वे शनैः-शनैः पकते रहते हैं। बेल के कच्चे फल ही बहुत गुणकारी कहे गये हैं और सब वृक्षों के पके ही फल गुणकारी हुआ करते हैं, किन्तु बेल तो कच्चा ही गुणकारक होता है, पका बेल का फल अनेक प्रकार के दोषों को उत्पन्न करने वाला बताया गया है।❀ किन्तु

× इति प्रवालस्तवकफलपुष्पदलोत्करैः।
तरूणां नम्रशाखानां मध्येन यमुनां गतः ॥
(श्री० भा० १० स्क० २२ अ० ३६ श्लोक)

❀ फलेषु परिपक्वेषु ये गुणाः समुदाहृताः।
विल्वादन्यत्रविज्ञेयाबिल्व मामं गुणोत्तरम् ॥
(वृ० नि० र०)

बेल से जो कच्चे फल तोड़कर रख लिये जाते हैं, उनके पकने पर पके का दोष उनमें नहीं आता। वे निर्दोष ही बने रहते हैं।

हाँ तो जब बेल के वृक्ष में पतझड़ हो जाता है तो उसमें पुनः कोमल-कोमल पत्ते निकलने लगते हैं। चैत्र में या वैशाख में जब नये कोमल पत्तों से वृक्ष भर जाता है, तभी उसमें पुष्प आने लगते हैं। पुष्प छोटे-छोटे सफेद रङ्ग के और अत्यन्त मधुर धीमी सुगन्ध वाले होते हैं। मेरे तो पूजा के घर के भीतर ही विल्व का वृक्ष है। दक्षिण ओर की भीत को फोड़कर उसे बाहर की ओर निकाला गया है। जब फूलता है तो सुगन्ध से घर भर जाता है। जो गुण विल्व में है, वे ही गुण विल्व के फूलों में हैं। वृहन्निघण्टु में लिखा है—बेल के पत्ते कफ, वात, आम और शूल नाशक तथा ग्राही और रोचक हैं। उसी प्रकार बेल के फूल अतिसार, तृषा और वमन को निवारण करने वाले हैं। ॐ

अब विल्वफल के सम्बन्ध में सुनिये। विल्व का फल गोल-गोल होता है। जंगलों में, वनों में जो अपने आप जंगली बेल होते हैं, वे बहुत छोटे, बहुत बीज वाले, कुछ मीठे, कुछ कड़वे और हीक वाले होते हैं। उन वृक्षों के तो पत्ते ही विशेष काम में आते हैं। फलों को तो कोई निर्धन जङ्गली लोग खाते हैं, नहीं तो आषाढ़ में वे पककर गिर जाते हैं उनमें कीड़े पड़ जाते हैं। इसीलिये धर्मशास्त्रों में आषाढ़ में विल्व फल खाना निषेध माना गया है। 'आषाढ़े वर्जयेत् विल्वम्।' वह आषाढ़ का बेल त्रिदोष कारक होता है।

नगरों में जो बड़े-बड़े बेलों के फल वाले वृक्ष होते हैं, उनके फलों को चैत्र में ही तोड़कर रख लिया जाता है और वे महीनों

ॐ तत्पत्रं कफवातामशूलघ्नम् ग्राहि रोचनम्।
निहन्याद् विल्वजं पुष्पमतिसारं तृषांवमिम्॥
(वृ०नि० र०)

रखे-रखे ही पक जाते हैं। उनमें कोई विकार नहीं होता। वे तरुण फल कहलाते हैं। उनका गुण ग्राही, कषेला, खट्टा, स्निग्ध, चरपरा, तीक्ष्ण, गरम, हलका, दीपन, पाचक, हृदय को हितकारी, कफ और वात को विनाश करने वाला होता है।+ यदि बड़े फल वाले विल्ववृक्ष के फल फाल्गुन, चैत्र, वैशाख में भी पेड़ पर पककर गिर जाँय तो उनमें भी पके फल के दोष न होंगे। पका फल दोषयुक्त आषाढ़ में ही होता है और जङ्गली छोटे फल वाले बेल आषाढ़ श्रावण तक भी पककर गिरते रहते हैं। पके फल के सम्वन्ध में कहा है—वेल का पका फल–दाहजनक, मधुर, भारी, कषेला, विष्टम्भ कारक, कड़वा, गरम, ग्राही, कटु, त्रिदोष-कारक, दुर्जर, वात कारक और मन्दाग्नि को उत्पन्न करने वाला है।*

विल्वफल में एक और भी विशेषता है जो अन्य किसी फल में नहीं है। आषाढ़ में यह पक जाय और किसी भी प्रकार डाली में ही लगा रहे पेड़ से पृथक् न हो तो वह पका फल पुनः कच्चा हो जाता है। उस कच्चे को तोड़कर रख दो तो वह सड़ जाता है, साधारणतया बेल दश ग्यारह महीने में पकता है, किन्तु जो पककर कच्चा वन जाता है, वह दुवारा पक भी शीघ्र ही जाता

\+ तरुणं तु फलं बैल्वं ग्राहि तूवरमम्लकम्।
स्निग्धं च कटु तीष्णञ्च उष्णं च लघुदीपनम्॥
पाचकं कफवाय्योश्च नाशकं हृदयप्रियम्।
(शा० नि० भू)

* पक्वं वैल्वं दाहकरं मधुरं गुरुतूवरम्।
विष्टम्भकारि तिक्तोष्णं ग्राहकं कटुदोषलम्।
दुर्ज्जरं वातलं चाग्निमांद्य कृद् षिभिर्मतम्॥
(शा० नि० भू०)

है। क्वार अथवा कार्तिक में पककर गिर जाता है। एक बार मैं विहार में गिरडी में गया था। वहाँ एक सेठ जी के बँगले में ठहरा था। बँगले में ही शिवजी का मंदिर था। उस मंदिर में ही बेल का एक वृक्ष था। चरों ओर से घिरा हुआ था। वायु का वहाँ प्रवेश नहीं था। उस विल्व पर बड़े-बड़े कच्चे फल लटक रहे थे। यह स्यात् ज्येष्ठ आषाढ़ के पश्चात् की बात है। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ ये अब तक पके क्यों नहीं। मैं तो विल्व प्रेमी ही ठहरा। मेरा एक नाम "बेल वाले बाबा" भी है। मैंने एक या दो बेल तोड़कर रख लिये कि ये पक जायँगे तब भोग लगाऊँगा। उन्हें लेकर कलकत्ता गया। चार पाँच दिन के पश्चात् उन्हें फोड़ा तो वे सड़ गये थे। मेरा अनुमान है कि निर्वात स्थान में रहने से वे पेड़ पर ही लटके रहे। पककर पुनः वे कच्चे हो गये होंगे। यह विशेषता विल्वफल में ही है। कंदों में सूरण (जमीकंद) सबसे अधिक भूमि में रहता है। वह तीन वर्ष में या पाँच वर्ष में बड़ा परिपक्व होता है। इसीलिये उसका नाम अर्शारि है। वह अर्श की (बवासीर) की सुप्रसिद्ध औषधि है। अर्श के रोगी को सूरण का जैसे हो तैसे सेवन करना चाहिये।

फलों में स्यात् बेल ही ऐसा फल है जो लगभग एक वर्ष तक पेड़ में रहता है। इसीलिये ४० नामों से बेल का एक नाम 'सदा-फल' भी है। पककर जहाँ बेल गिर जाते हैं वहीं दूसरे नये फल इसमें आ जाते हैं। इसी से यह उदर के समस्त रोगों के लिए विशेषकर अर्श, अतिसार और संग्रहणी के लिये रामवाण ओषधि है। पेट के रोगों को बेल से बढ़कर हितकारक सद्यः फल देने वाली संसार में स्यात् ही कोई दूसरी ओषधि हो। किसी भाँति बेल पेट में पहुँच जाय, वह पाचन शक्ति को नियमित करेगा ही। जिसका मल पतला हो गया हो, जिसे बार-बार शौच जाना पड़ता हो, उसे बेल का चूर्ण, या पानी से धोकर

मुरब्बा, या पका या भुना बेल ही खाने को दो तो तुरन्त मल बँधने लगेगा। जिसका मल कड़ा हो गया हो, मल की गाँठें पेट में भर गई हों उसे बेल गिरी और सौंफ का काढ़ा दो। मल ढीला होकर तुरन्त निकल जायगा। पतले मल को बाँधता है और कड़े मल को पतला करके निकालता है। यही इसकी विशेषता है। बहुत से लोग यही जानते हैं कि बेल खाने से मल बँधता है कड़ा होता है, वे इस भय से बेल नहीं खाते हैं कि हमारा मल रूक न जाय। किन्तु यह उनका भ्रम है। बेल तो आँतों की प्रक्रिया को विशुद्ध बनाता है। आँतों में कफ भर गया हो तो बेल ही शनैः शनैः बहुत दिनों में उसे निकालने में समर्थ होगा। अर्श, अतिसार और संग्रहणी के लिए बेल से बढ़कर दूसरी विशुद्ध और तत्काल गुण करने वाली दूसरी वस्तु है ही नहीं। आजकल जो विदेशी नयी औषधियाँ चली हैं वे तत्काल तो रोग को नहीं--रोग के उपद्रवों को शान्त कर देती हैं, किन्तु रोग को जड़मूल से निकालने में समर्थ नहीं।

आगे हम यह बतायेंगे कि अर्श, अतिसार और संग्रहणी कैसे होती है और बेल का प्रयोग इनमें कैसे करना चाहिये।

छप्पय

बिल्व, सदाफल, पूतिवात, मंगल्य, महाफल।
उदररोगको शत्रु पत्र शिव-सुखद तीन दल॥
नित नित सेवन करो दोष दुख दुरित नसावै।
कच्चो देउ सुखाय बेलगिरि वही कहावै॥
पतरो मल गाढ़ो करै, सूखेकूँ ढ़ीलो करे।
गुड़ सँग खावै पकेकूँ, रक्तआम शूलहिँ हरे॥

उदर रोगों में विल्व

(६)

गुडेन खादयेद् विल्वं रक्तातीसार नाशनम् ।
आमशूल विबंधघ्नं कुक्षिरोग विनाशनम् ॥*

(वृ०नि०र०)

गुडेन वक्वं दातव्यं बिल्वं रक्तातिसारिणे ।×

(हारीत संहितायाम्)

छप्पय

अतीसर रिपु विल्व, आमको नाश करावै ।
संग्रहणी अरु अर्श रोगमें सुख पहुँचावै ॥
चाहिँ अकेलो खाय, अन्य ओषधि वा सँगमें ।
कच्चो, पक्को भुन्यो, लाभ पहुँचावै अँगमें ॥
ओषधि योग अनेक हैं, बेलगिरी कहलात है ।
विल्व अमृत फलके सरिस, सब शास्त्रनि विख्यात है ॥

पूर्व जन्म के किये पाप ही व्याधि–रोग बनकर प्राणियों को कष्ट पहुँचाते हैं। उसकी शान्ति के लिये पाँच उपाय करने चाहिये।

---

* बेलगिरी को गुड़ के साथ मिलाकर खावें तो रक्तातिसार, आम-काशूल, विवन्ध तथा कुक्षी (कूख) के रोगों को नाश करता है।

× पके हुए बेल विल्व के फल को गुड़ के साथ रक्तातिसार वाले को देना चाहिये।

(१) पहिला उपाय तो यह है, किसी अच्छे अनुभवी चिकित्सक से पहिले रोग का निदान कराकर शास्त्रीय विधि से औषधि सेवन करना चाहिये। (२) दूसरा उपाय है, यथा शक्ति यथा सामर्थ्य दान पुण्य करना चाहिये। (३) तीसरा उपाय है या तो स्वयं या पंडित द्वारा जिस क्रूरग्रह का प्रकोप हो उस ग्रह की शांति के निमित्त उसी ग्रह के मंत्र का जाप कराना चाहिए। (४) चौथा उपाय है, ग्रह शांति के निमित्त हवन कराना चाहिए। (५) पाँचवा उपाय है देवताओं का विधिवत पूजन करना चाहिये या कराना चाहिये।* इन पाँच उपायों से रोगों की शांति होती है। आज से ५०।६० वर्ष पूर्व तक रोगी की रोग निवृत्ति के निमित्त ये पाँचों उपाय मेरे सामने यथाशक्ति किये जाते थे। अब चार उपाय तो समाप्त हो गये। केवल पाश्चात्य चिकित्सकों की व्यय-साध्य चिकित्सा ही करायी जाती है। पहिले जो व्यय इन पाँचों उपायों में किया जाता है अब वह सब पाश्चात्य अशुद्ध विद्या विशारद चिकित्सकों के ऊपर व्यय होता है और ओषधियों का व्यवसाय करने वाली कुछ विशेष रोगों के लिये निश्चित (पेटेन्ट) ओषधियों को बनाने वाली विशाल दुकानों (कम्पिनियों) में चला जाता है। इसी से कोई भी मनुष्य पूर्ण स्वस्थ नहीं होता। उन निश्चित ओषधियों का वह व्यसनी हो जाता है। ऐसा न हो तो वे विशाल दुकानें चलें कैसे ?

विल्वफल एक उदर रोगों की रामवाण ओषधि है। विशेषकर अर्श, अतिसार और संग्रहणी की। पहिले तो हम संक्षेप में यह बतायेंगे कि ये रोग होते किस पाप के कारण हैं और इनकी शांति के ओषधि के अतिरिक्त और कौन से उपाय हैं। इन रोगों में विल्व का सेवन कैसे करना चाहिए।

---

* पूर्व जन्मकृतं पापं व्याधिरूपेण वाधते।
तच्छांतिरौषधैर्दानैर्जपहोमसुरार्चनैः॥

मुझे एक श्लोक याद है, यह स्मरण नहीं रहा, वैद्यक के किस ग्रन्थ में यह श्लोक है, श्लोक इस प्रकार है—

अर्शातिसार ग्रहणी विकराः प्रायेणतेऽन्योन्य समानभूताः ।
शान्तेऽनले ते प्रभवन्तिरोगाः दीप्तेऽनले ते सहसा व्रजन्ति ॥

इसका अर्थ यह हुआ कि अर्श, अतिसार और संग्रहणी ये प्रायः करके अन्योन्याश्रयी हैं। प्रायः एक से ही होते हैं। जब जठराग्नि मंद हो जाती है तब ये रोग होते हैं, जहाँ अग्नि प्रदीप्त हुई वहाँ तुरन्त ये रोग चले जाते हैं।

इसी प्रकार का श्लोक वृहन्निघण्टुरत्नाकर में अर्श चिकित्सा क्रम में आता है, उसका पाठ भिन्न है वह इस प्रकार है—

अर्शोतिसार ग्रहणी विकाराः प्रायेण चान्योन्य निदान भूताः ।
सन्नेऽनले सन्ति न सन्ति दीप्ते रक्षेदतस्तेषु विशेषतोऽग्निम् ॥

अर्थात् अर्श, अतिसार, और संग्रहणी ये विकार प्रायः अन्योन्याश्रय से हुआ करते हैं जब अग्नि मंद होती है तब होते हैं। अग्नि के दीप्त होने पर नहीं होते। अतः वैद्य को चाहिये इन रोगों में विशेषकर अग्नि की रक्षा करनी चाहिये। दोनों का भाव एक ही है केवल पाठ भेद मात्र है। बृहन्निघण्टुरत्नाकर में अर्श, अतिसार और संग्रहणी रोग पूर्वजन्म के किन पापों के कारण से होते हैं। इसमें पहिले अतिसार के लिए चार कारण बताये (१) जो स्मार्त अग्नि को शमन करते हैं। (२) जो अग्निहोत्र की तीनों अग्नियों (गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि) को शान्त करने वाले हैं। (३) और जो अपनी स्त्री की हत्या करते हैं उन्हें अतिसार रोग होता है, तथा जो बन में आग लगा देते हैं उन्हें रक्तातिसार हो जाता है। स्मार्त अग्नि नष्ट करने वाले को "अग्निरश्मि" जो ऋचायें हैं उनका पाठ करे। फिर उसका दशांश तिलों का हवन घृत तिल और सुवर्ण का दान करे।

जो अग्नित्रयी का नाशक हो उसे तावें या सुवर्ण की अग्नि की मूर्ति बनाकर अग्निहोत्री को अथवा ब्रह्मचारी को दान दे। दान के मंत्र का भाव यह है—"तू अग्नित्रयी रूप तथा पूज्य है मनुष्यों के मरण पर्यन्त साथ रहने वाली तथा जन्मान्तर के पापों को जानने वाली हो। मेरे इस अतिसार रोग को शान्त करो।" इस मंत्र से अग्निदान करने से अतिसार रोग शांत हो जाता है।❀

स्त्रीहन्ता १० पीपल वृक्ष लगावे १०० ब्राह्मणों को भोजन करावे। वन में आग लगाने वाले रक्तातिसारी को चाहिये जल की प्याऊ लगावे १० वटवृक्ष लगावे।

इसी प्रकार संग्रहणी योग बुरे ग्रहों के कारण से तथा सुशीला पतिप्राणा पत्नी के परित्याग रूपी पाप से होता है। उसकी शांति के लिये १००८ शिव संकल्प सूक्त के पाठ करावे गोदान करे, हवन करावे। फिर ब्राह्मण का पूजन करके सुवर्ण की अंगूठी तथा कृष्णा गौ का दान करे। दान के मन्त्र का भाव है—हे देवकीनन्दन ! हे कंस चाणूर निकृन्दन ! हे अरिष्टासुरारि ! हे कृष्ण ! हे गोपीजन बल्लभ ! मेरे इस संग्रहणी रोग को नाशकर दें।+

इसी प्रकार दुष्ट ग्रहों के रोग से अर्श होता है। दूसरे जो बेतन देकर (ट्युशन से) पढ़ते हैं अथवा वेतन लेकर अध्यापन

❀ त्रेतारूपोऽग्निरीड्यस्त्वमन्ततश्चासि वैनृणाम् ।
त्वं वेत्थ प्राक्तनं पापमतिसारं विनाशय ॥
एवं कृत्वा नरः सम्यगतिसारं व्यपोहति ।
नीरुजं च सुखीनित्यं दीर्घमायुश्चविन्दति ॥
(बृ० नि० र०)

+ देवकीपुत्र चाणूर कंसारिष्ट विनाशन !
नाशय ग्रहणीं कृष्ण गोपीजन मनोहर ! (बृ० नि० र०)

करते हैं। या जो पहिले दक्षिणा ठहरा कर जप अथवा हवन करवाते हैं। पूर्व जन्म के इन पापों के कारण अर्श (बवासीर) होता है।*

इस प्रकार पूर्वजन्म के पापों के कारण ये उदर के अर्श, अतिसार और संग्रहणी रोग होते हैं। ये होते क्यों हैं ? मल मूत्रों के वेग को रोकने से, अधिक जल या पेय पदार्थ पीने से, मिथ्या आहार विहार से, विपरीत योग के पदार्थों को खाने से, भोजन के ऊपर पुनः तुरन्त भोजन करने से, बिना भूख के खा लेने से, अधिक भोजन करने से, गरिष्ठ, स्वादिष्ठ, भारी, घृत तैल के तले पदार्थों को निरन्तर अधिक मात्रा में खाने से, अजीर्ण होने पर भी भोजन करने से, अधिक घृत या घृत के बने पदार्थ खाने से, अधिक मद्य सेवन से, दूषित जल या दूषित पदार्थों के सेवन से उदर सम्बन्धी अर्श, अतिसार तथा संग्रहणी आदि रोग हो जाते हैं। इनकी लगकर विधिवत् चिकित्सा न की जाय तो ये यहीं नरक की यातना के दुखों का अनुभव कराते हैं तथा अन्त में ये ही रोग मृत्यु का कारण होते हैं। ऐसे रोगियों के लिये हरिहर की पूजा, उन पर बेलपत्र चढ़ाना तथा निरन्तर बेल का सेवन ये ही रामबाण औषधि हैं। अब हम इसके लिए बेल की तथा बेल से सम्बन्धित और भी अनेक औषधियों को बताते हैं।

पक्के बेलों के गिरते ही पतझड़ होने के अनन्तर फूल आने के पश्चात् कुछ ही दिनों आषाढ़ में ही कच्चे फल आने लगते हैं। श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक और मार्गशीर्ष तक के बेल को

---

* दत्त्वाथ वेतनं योऽध्येत्यादायापि च वेतनम् ।
जुहुयाद् वाऽध्यापयेच्च जपेद्वाऽर्शोयुतो भवेत् ।।
(बृ० नि० र०)

बाल विल्व कहते हैं। मार्गशीर्ष से उसमें तरुणायी आ जाती है। मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन, चैत्र और वैशाख तक तरुण रहता है जेष्ठ से उसमें वृद्धावस्था आ जाती है। आषाढ़ में कोई श्रावण में उनका अन्त हो जाता है। जो बेल बारहमासी होते हैं, उनके फल सर्वथा ग्राह्य हैं, क्योंकि उनमें बौर, कच्चे फल, तरुण फल और पके फल ये चारों प्रकार के सदा लगे रहते हैं। ऐसे बेल के फलों को मैंने वर्षों सेवन किया है।

विल्वपेषिका अथवा बेलगिरी

ओषधियों में बेलगिरी का ही विशेष प्रयोग आता है। मार्गशीर्ष तक के कच्चे बेलों को तोड़ ले। फिर बसूला से उसके कड़े छिलके को छील ले फिर उसके छोटे-छोटे टुकड़े करके सुखा ले। यही सूखी हुई बेलगिरी बन गयी। इसे अकेले ही या अन्य ओषधियों के साथ खाने से पेट के सभी रोगों को लाभ होता है और सब फल तो पकने पर ही लाभ करते हैं किन्तु दाख, कच्चा विल्व और हरड़, बहेड़ा, आमला ये सूखने पर ही अधिक गुण वाले होते हैं।❀

विल्व सौंफ क्वाथ

जिनका मल शुष्क होकर उतरता न हो, या अधिक पतले शौच होते हों। उन्हें चाहिये सूखी बेल गिरी चार तोला एक तोला सौंफ को आधा सेर पानी में आग पर चढ़ा दे। चतुर्थांश दो छटांक जल रह जाय। तब उतारकर छानकर तनिक मिश्री

❀ फलेषु परिपक्वं यद्गुणवत्तदुदाहृतम्।
विल्वादन्यत्र विज्ञेयमामन्तद्धि गुणाधिकम्।
द्राक्षाविल्वशिवादीनां फलं शुष्कगुणाधिकम्॥

(भावप्रकाशे)

मिलाकर पी जाय। लगभग सात दिनों तक इस क्वाथ को पीवे। कड़ा मल ढीला होकर निकल जायगा। पतला बँधकर निकलेगा।

बेल का मुरब्बा

कच्चे बेलों को छीलकर उसके गोल-गोल टुकड़े बनाले। उन्हें अग्नि पर चढ़ाकर उबाल ले अधिक नहीं उबाले गले नहीं। फिर चीनी की चासनी बनाकर उन उबले हुए टुकड़ों को डाल दे। चार पाँच दिन में वे पानी देने लगेंगे चासनी को ढीलाकर देंगे। तब पुनः चासनी को आग पर चढ़ाकर पानी को सुखाकर टुकड़ों को भी गरम करके गाढ़ी चासनी में रख देना चाहिए। यदि १०।२० दिन में पुनः पानी देने लगे तो फिर चासनी को आग पर चढ़ाकर गरम करे। न पानी छोड़े तो वैसे ही रख ले। ऐसा मुरब्बा वर्षों तक रखा रहता है विगड़ता नहीं। यदि उसमें पानी रह जायगा तो ऊपर फफोद लग जायगी खराब हो जायगा। पेट के समस्त रोगों को यह मुरब्बा परम उपकारी होता है। जिन्हें शर्करा रोग मधुमेह हो, उन्हें मुरब्बा को पनी में धोकर लेना चाहिए। अनेक रोगों में मुरब्बा के साथ सितोपलादि चूर्ण भी लेते हैं और भी बहुत-सी ओषधियाँ विशेषकर उदर सम्बन्धी बेल के मुरब्बे के साथ दी जाती हैं। बृहन्निघण्टु रत्नाकर के अतिसार चिकित्सा प्रकरण में अतिसार का स्यात् ही कोई ऐसा योग होगा जिसमें विल्व का उपयोग न हुआ हो। उनमें से कुछ योग हम यहाँ देते हैं।

बिल्वादि षडङ्गयूष

(१) बेलगिरी, २– धनिया, ३– जीरा, ४– पाढ़, ५– सोंठ और ६– तिल। इन ६ वस्तुओं का चूर्ण बनाकर इस चूर्ण का यूष

बनाकर पिये तो इस षडङ्गयूष के पीने से अतिसार नाश हो जाता है।[१]

धान्य पञ्चक पाचन

(१) बेलगिरी, (२) धनिया, (३) नेत्रबाला, (४) नागरमोथा तथा–सोंठ इन सब को बराबर लेकर इनका काढ़ा बना ले। इसे पीने से आम शूलक नाश हो जाता है। यह काढ़ा ग्राही, रेचक, दीपन और पाचक है।[२]

धातक्यादि मोदक

(१) धाय के फूल, (२) बेलगिरी, (३) सोंठ, (४) पाषाणभेद, (५) अजमोद, (६) नागरमोथा, (७) मोचरस और (८) चूका। इन आठ वस्तुओं को घोंट पीसकर लड्डू बना ले तो यह लड्डू सभी प्रकार के अतिसारों को नाश करता है।[३]

कुटुज चूर्ण

(१) इन्द्र जौ, (२) नागरमोथा, (३) धाय के फूल, (४) बेलगिरी, (५) लोंध, (६) सोंठ और (७) मोचरस इन सातों के चूर्ण को गुड़ और छाछ के साथ ले तो घोर अतिसार नष्ट हो जाय।[४]

---

१. विल्वं च धान्य च सजीरकं च पाठा च शुण्ठी तिलसंयुक्ता च।
पिष्ट्वा षडङ्गः सहितो नराणां यूषस्त्वतीसारहरः प्रदिष्टः॥

२. धान्य वालक विल्वाद् वा नागरैः साधितं जलम्।
आमशूल हरं ग्राहि भेदि दीपन पाचनम्॥

३. धातकी विश्वपाषाणं मलूरमज मोदकम्।
मुस्तं मोचरसं चुक्रं सर्वातीसार शांतये॥

४. इन्द्रजमेघमदा कुसुम श्री लोध्र महौषध मोचरसानाम्।
चूर्णमिदं गुडतक्रनिपीतं हन्त्यचिरादतिसारमुदारम्॥

कापित्थादि पेया

(१) कैथे का गूदा, (२) बेलगिरी, (३) चूका, (४) छाछ और अनारदाना इनकी पेया ग्राहणी और पाचनी है अथवा वाताधिक अतिसार पर पञ्चमूल से बनी पेया देवे।[1]

मसूराद्य घृत

(१) मसूर ४०० तोला लेकर १०५४ तोले पानी में औटावे चतुर्थांश रहने पर उसमें बेलगिरी का चूर्ण ३२ तोले और घी ६४ तोला मिलाकर आग पर चढ़ादे जलते-जलते जब घृत मात्र रह जाय तब उतारकर छान ले। इस घृत का नित्य सेवन करे तो सर्वप्रकार के अतिसार संग्रहणी, मूलका टूट-टूटकर निकलना, तथा प्रवाहिका का नाश करता है।[2]

बिल्वादि काढ़ा

बेलगिरी, इन्द्रजौ, नागरमोथा, नेत्रबाला और अतीस इन पाँचों का काढ़ा आम सहित पित्तातिसार को दूर करता है।

बिल्वादि योग

बेलगिरी को भेड़ के दूध में पकावे। पकने पर उसमें मिश्री, मोचरस और इन्द्रजौ के चूर्ण को मिला दे। इसके पीने से रक्तातिसार का नाश हो जाता है।[3]

---

१. कपित्थ विल्व चांगेरी तक्रदाडिमसाधिता।
ग्रहणी पाचनी पेया वाते पञ्चमूलिका॥

२. मसूराणां पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत्।
पादशेषं शृतं नीत्वा दत्त्वा विल्व पलाष्टकम्॥
घृतप्रस्थं पचेत्तेन सर्वातीसार नाशनम्॥
ग्रहणी भिन्न विट्कं च नाशयेच्च प्रवाहिकाम्।

३. विल्वं छागपयः सिद्धं सितामोचरसान्वितम्।

कलिंग चूर्ण संयुक्तं रक्तातीसारनाशनम्॥

गुडविल्व योग

बेलगिरी को गुड़ के साथ मिलाकर खाये तो रक्तातिसार, आमकाशूल, विबन्ध, और कूख के सब रोग इस योग से दूर होते हैं।[१]

बाल विल्वादि योग

कच्चा बेल का फल और कालीमिरच इसका काढ़ा गुड़ तथा तेल डालकर सेवन करे तो तीन दिन में बहुत दिन की प्रवाहिका नाश हो जाय।[२]

विल्व पेश्यादि काढ़ा

बेलगिरी, गुड़, लोध, तेल और कालीमिरच इन पाँचो पदार्थों को बराबर-बराबर ले चूर्ण बनाकर चाटे तो प्रवाहिका में सुख प्राप्त होता है।[३]

इसी प्रकार संग्रहणी में भी बेल के अनेक प्रयोग हैं—जैसे

संग्रहणी रोग में पाचन

धनिया, बेलगिरी, खिरेंटी, सोंठ और सालवन इनका काढ़ा संग्रहणी, अफरा तथा मल की दुष्टता को दूर करता है।[४]

---

१. गुडेन खादयेद् विल्वं रक्तातीसार नाशनम्।
आमशूल विबन्धघ्नं कुक्षि रोग विनाशनम्॥

२. बालविल्वं गुडं तैलं पीतं वा मरिचोद्भवम्।
त्र्यहात्प्रवाहिकां हन्याच्चि रकालानुबन्धिनीम्॥

३. बिल्व पेशी गुडं लोध्रं तैल मरिच संयुतम्।
लिह्यात् प्रवाहिका क्रांतः सत्वरं सुखमाप्नुयात्॥

४. धान्य बिल्व बलाशुण्ठी शालपर्णी शृतं जलम्।
स्यात् वात ग्रहणीदोषे सानाहे सपरिग्रहे॥

श्री फलादि कल्क

कच्चे बेलगिरी के कल्क में सोंठ का चूर्ण और गुड़ डालकर खाय। तथा छाछ के साथ भात का भोजन करे तो संग्रहणी पर विजय प्राप्त कर लें।[1]

मसूरादि योग

मसूर के काढ़े में बेलगिरी डालकर औटावे जब बेलगिरी पककर एक रस हो जाय तब उतार कर कपड़े से छानकर पीवे तो सम्पूर्ण कूख के रोग, संग्रहणी, पाण्डु रोग और कमला इन सब का नाश करता है।[2]

विल्वाग्नि घृत

बेलगिरी, चित्रक (चीते की छाल) चव्य, अदरक और सोंठ इनका काढ़ा और इनके कल्क से घृत को सिद्ध करे। अर्थात् काढ़े में कल्क और घृत मिलाकर अग्नि पर चढ़ा दे जब सब जलकर घृत ही रह जाय तो उसे छानकर काँच के पात्र में या चिकने पात्र में रख ले। उस घृत का जो सेवन करते हैं, उदर का गोला, सूजन समस्त उदर रोग, प्लीहा, शूल तथा अर्श ये सब रोग नष्ट होते हैं।यह घृत भूख को बढ़ाने वाला दीपन है।[3]

बिल्वफलादि चूर्ण

बेलगिरी, नागरमोथा, नेत्रवाला, माचरस और इन्द्रजौ इनके

---

१. श्रीफलशलाटु कल्को नागर चूर्णेन मिश्रितः सगुडः ।
ग्रहणीगदमृत्युग्रं तक्रभुजा शीलितो जयति ॥

२. मसूरायाः कषायेण बिल्वगर्भं विपाचयेत् ।
हन्ति कुक्ष्यामयान्सर्वान्ग्रहणी पाण्डकामलान् ॥

३. विल्वाग्नि चव्यार्द्रक शृङ्गवेर क्वाथेन कल्केन च सिद्धमाज्यम् ।
सच्छगुल्मं ग्रहणीगदोत्थं शोफाग्निसादारुचिनुद्वरं तत् ॥

चूर्ण को बकरी के दूध के साथ पीने से संग्रहणी तथा आमरक्त का नाश हो जाता है।[1]

ये कुछ योग तो हमने बृहन्निघण्टु रत्नाकर के चतुर्थ भाग अर्शातिसार ग्रहणी प्रकरणों से दिये। छटे भाग में अण्डवृद्धि प्रकरण में भी कई औषधियों में विल्व का प्रयोग है। जैसे—

विल्वादि चूर्ण

बेल की जड़, कैथे की जड़, टेंटू, चित्रक, कटेरी, बड़ी कटेरी, निसोथ, पूतिकरंज, सहँजना, सोंठ, मिजावे, पीपल, पिपलामूल, मिरच, पाँचोनमक, जवाखार, अजमोद, कचूर इनके चूर्ण को कांजी, गरम जल अथवा छाछ के साथ पीवे तो अण्डवृद्धि दूर हो जाय[2]

इसी प्रकार हारीतसंहिता में अतीसार की अनेक औषधियाँ हैं, उनमें से बहुतों में विल्व का प्रयोग है। जैसे वत्सकादि क्वाथ है। इसमें कश्मीरी पाठा, इन्द्रजव, देवदारु, हरड़, धनिया, बेलगिरी, पीपल, गोखरू, गल्ला, गजपीपल इन सबका काढ़ा बनाकर पीवे तो इससे अत्यन्त शूल, राद, ज्वर, कफ से युक्त अतीसार को लाभ होता है।[3]

---

१. श्रीघन पालक मोचकशक्रं चूर्णमजापयसा परिपेयम्।
हन्ति च तद्ग्रहणीभयमाशु सामगदं रुधिरेण विमिश्रम्॥

२. मूलं विल्व कपित्थयोररलुकस्याग्रे वृंहत्योर्द्वयोः।
श्यामापूतिकरंज शिग्रुकतरोर्विश्वौषधारुष्करम्॥
कृष्णाग्रंथिकवेल्ल पंचलवणं क्षाराजमोदान्वितम्।
पीतं कांजिक मुष्ण तोय मथितै चूर्णीकृतं वर्ध्मजित्॥

३. वत्सकातिविषविल्व मुस्तकं बालकेन सहितं जलेनतु।
क्वाथ पानमतिशूल रक्तपूयनाशं ज्वरयुतेऽतिसारके॥

हारीत संहिता के शुण्ठयादि पाचन, वत्सकादि क्वाथ, पञ्च मूली क्वाथ, उशीरादि क्वाथ, शालपर्ण्यादिपानक, वत्सादि क्वाथ, धान्यादि क्वाथ, कुटजादि चूर्ण आदि में विल्व का योग है। वहाँ गुडविल्वादि एक योग है। पके बेल के फल को गुड़ के साथ दे तो रक्तातिसार में हितकर है अथवा हरड़ को शहद के साथ या दही के साथ दे।[1]

बालकों को बिल्वादि चूर्ण बताया है।

एक बेल, अगर और लोध इनके चूर्ण में शहद मिलाकर चटावे तो बालकों की धातुओं को क्षीण करने वाले रक्तातिसार का नाश करता है।[2]

वृहन्निघण्टु रत्नाकर में आदि ग्रन्थों के विल्व सम्बन्धी ये कुछ योग हमने उदाहरण के रूपमें लिखे हैं। वैसे अर्श, अतिसार और संग्रहणी की प्रायः अनेकों ओषधियों में अन्य ओषधियों के साथ विल्व का योग है। जैसे धान्यपञ्चक, कपित्थाष्टक चूर्ण, कपित्थादिपेया, पंचमूल बलादिपेया, संगमादिचूर्ण, कृमिशत्र्वादि काढ़ा, चव्यादि चूर्ण, शुण्ठीपुटपाक, संगमादि क्वाथ, मंचमूली-बलादि क्वाथ, अनन्द भैरवी, पृश्निपर्ण्यादि क्वाथ, यावन्यादि क्वाथ, त्रिकटुकादि यवकांजी, पद्मादि चूर्ण, अम्बष्ठादिगण, संगमादियोग चतुष्टय, कंटकादि चूर्ण, मुस्तादि चूर्ण, कुटजावलेह, गुडूच्यादि क्वाथ, उशीरादि क्वाथ, पंचमूलादि क्वाथ, अरल्वादि क्वाथ, पृश्निपर्ण्यादिपेया, विजयायोग, समंगादि क्वाथ, विल्वादि क्वाथ, आम्रादि क्वाथ, चित्रकादि क्वाथ, ह्री वेरादि काथ,

---

१. गुडेन पक्वं दातव्यं विल्वं रक्तातिसारिणे।
दध्ना वा मधुना पथ्या रक्तातीसार नाशिनी॥

२. एक बिल्वागुरुलोध्रचूर्णं मध्वादि योजितम्।
रक्तातीसार शमनं बालानां क्षीण धातुकम्॥

लघुगंगाधर चूर्ण, वृद्धगंगाधर चूर्ण, धातक्यादि चूर्ण, दाड़िमीवटी, मोचरसादि पुटपाक, गंगाधर रस, बालविल्व कल्क, बालविल्वादि योग, विल्वपेश्यादि क्वाथ, मुस्तादियोग, मुस्तादिगुटी, त्र्यूषणादि-घृत, शालिपर्ण्यादि काढ़ा, कपित्थादिथवागू पाठाद्य चूर्ण, श्रीफला-दि कल्क, नागरादि चूर्ण, ग्रहणीगजकेशरी रस, नारायण चूर्ण, मसूरादि योग, विल्वाग्निघृत, लाही चूर्ण, चव्यादि चूर्ण, कपित्था-ष्टक चूर्ण, बेलफलादि चूर्ण, सिद्धघृत, चव्यादिघृत, ह्रीवेरघृत, पाठामूल चूर्ण, कुटजावलेह, विजया चूर्ण, यवानी चूर्ण, विल्वादि चूर्ण, वातजग्रंथीयत्न, मंजिष्ठादि क्वाथ, विल्वादि क्वाथ, धात-क्यादि लेह, नागरादि चूर्ण, नक्तमालाद्यंजन तथा कीट जलौका चिकित्सा आदि-आदि योगों में विल्व का प्रयोग किया जाता है। आयुर्वेद के जितने भी ग्रन्थ हैं उनमें सहस्रों ओषधियों में विल्व का महत्वपूर्ण योग है। विस्तारभय से हम यहाँ अधिकों का उल्लेख नहीं कर सकते। ये सब योग हमने बृहन्निघण्टु रत्नाकर में से लिखे हैं, वैद्यगण उसी में देखें।

पटना से प्रकाशित होने वाला वैद्यनाथ अयुर्वेद भवन का सचित्र अयुर्वेद, मासिक पत्र है। उसके अगस्त सन् १९८० के अंक में कविराज पं० राधावल्लभ पन्त (भिषगाचार्य, धन्वन्तरि, वी० आई० एम० एस०) का विल्व के ऊपर एक छोटा-सा किन्तु महत्वपूर्ण लेख है। उसमें उन्होंने विल्व का प्रयोग कहाँ-कहाँ किस योग में होता है, अत्यन्त संक्षेप में सूची दी है। उसमें सैकड़ों प्रयोगों का संकेत है। मेरे पास वे ग्रन्थ नहीं हैं, इसीलिये मैंने उनका यहाँ उल्लेख नहीं किया। वे उद्धरण सर्व साधारण के काम के न होकर वैद्यों के योग्य हैं। मेरे पास जितने वैद्यक के ग्रन्थ उपलब्ध थे उन्हीं में से मैंने कुछों का ही यहाँ उल्लेख किया।

यह तो मैंने वैद्यक ग्रन्थों के अनुसार योगों का उल्लेख

किया। अब मैं अपने अनुभूत कुछ योगों का यहाँ उल्लेख और करता हूँ।

हम एक चूर्ण बनाते हैं। उसमें १–सोंठ, २–कालीमिरच, ३–पीपल, ४–हरड़, ५–बहेड़ा, ६–आँवला, ७–सौंफ, ८–धनियाँ, ९–सनाय, १०–बड़ी इलायची। इन दश चीजों को बराबर-बराबर ले। जैसे सब चीजें दो-दो तोला ली तो २० तोला हुईं। इसमें २० तोला बेलगिरी का चूर्ण मिला ले तो ४० तोला सब वस्तुएँ हुईं। उसमें ४० तोला ही कच्ची खांड़ मिला ले। इस चूर्ण को काँच के बर्तन में रख ले। दो तोला या चार तोला अपनी शक्ति अनुसार सायंकाल दूध के साथ या गरम जल के साथ ले। प्रातःकाल खुलकर शौच होगा और शनैः-शनैः समस्त उदर की व्याधियाँ समाप्त हो जायँगी। इस चूर्ण को मैंने अनेकों पर प्रयोग किया है। शत प्रतिशत लाभ हुआ है।

बेल का पान (शरबत)

गरमी के दिनों में चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ में जब पके बेल मिलने लगते हैं बेल का शरबत बनाकर पीवे। विष्ठंं अजीर्ण, (कब्ज़ी) का नाश होगा। जिनकी प्रकृति कोमल है, पका बेल कुछ भारी होता है, वायु को बढ़ाता है। वे बेल के गूदे को पाव आध सेर जल में डाल दें। २–३ घंटे तक उसे जल में पड़ा रहने दें। फिर बिना मसले उस बेल के पानी को नितार ले। बेल के गूदे को किसी को दे दें। उस जल में शहद या मिश्री मिलाकर पीवें। हलका, पाचक, दीपक, भूख बढ़ाने वाला और सुस्वादु मधुर और परम हितकर होगा।

बिल्वत्रिफल रसायन

पके आम के रस को सुखाकर पापड़ की भाँति बेलकर अमा-चट बनाते हैं। बाजार में भी अमावट बिकती है। उसी प्रकार

पके बेल के गूदे को छानकर पापड़ की भाँति बिल्वावट बनाले। पुराने आमलों का मुरब्बा ले। इन तीनों वस्तुओं को बराबर लेकर पीसलें। कल्क पिट्ठी बनाकर रखले। यह एक प्रकार का त्रिफलावलेह बन गया। इसे सोते समय एक तोले से लेकर पाँच तोले तक अपनी प्रकृति के अनुसार खाकर ऊपर से दूध पीवे। यदि दूध के स्थान में पिप्पली पाक पीवे तो और लाभप्रद हो।

एक पाव या आधा सेर दूध ले-ले उसमें बराबर का जल मिलाकर एक बड़ी पीपल डालकर पकावे। जब जल, जल जाय केवल दूध रह जाय। यही पिप्पली पाक बन गया। इसमें थोड़ी मिश्री मिलाकर अवलेह खाकर ऊपर से दूध पी लीजिये। यह शक्तिवर्धक, पाचक, हृद्य, सुखकर स्वास्थ वर्धक रसायन है, इससे उदर के रोग भी नाश होंगे और शक्ति बलवृद्धि भी होगी।

यहाँ तक हमने बालविल्व तथा बेलगिरी के सम्बन्ध में बताया। अब आगे युवाबेल, वृद्धबेल, बेलों के बीज, बेल के तेल, बेल के काँटों के सम्बन्ध में बतावेंगे।

छप्पय

बालविल्व वा तरुन विल्वकूँ छीलि सुखाओ।
बेलगिरी बनि जाय ताहि कैसेहू खाओ॥
ओषधि अन्य मिलाय शास्त्र सम्मत सब होवैं।
भोजन हाय सुपथ्य रोगकूँ जड़तैं खोवैं॥
तरुन बेलकूँ तोरिकें, घरमें लेउ पकाय।
खाओ रूखो पान करि, पीओ सुख उपजाय॥

बिल्व-बीज तैलादि

[७]

बाल विल्वाग्नि गोमूत्रे पिष्ट्वातैलं विपाचयेत् ।
साजक्षीरं च नीरं च बाधिर्यं हन्ति पूरणात् ॥*

(नि० र०)

छप्पय

बाल विल्व घृत-तैल सबहिं रोगनिकूँ नासै ।
बिल्व अग्निकूँ तीव्र करै सद्बुद्धि प्रकासै ॥
धारै कण्टकमाल स्तम्बको रोग नसावै ।
कच्चो पक्को बेल हरै रुज गुड़ सँग खावै ॥
बेल बीजके तेलकूँ, विधिवत वैद्य बनायँगे ।
कल्प करैं गो दुग्धतैं, नवजीवन नर पायँगे ॥

यह शरीर एक यन्त्र है, इसमें रस, रक्त, मांस, मज्जा, मेद, अस्थि, वीर्य, ओज, स्नायु, त्वचा आदि अनेक वस्तुयें हैं। ये सब अन्न द्वारा वृद्धि को प्राप्त होते हैं। जीव जिसे खाकर जीवित रहें उसे अन्न कहते हैं। गौ घास खाकर रहती है, उसका अन्न घास है, जो दूध पीकर रहते हैं उनका अन्न दूध है। जो फल, मूल पत्ते, मांसादि खाकर रहते हैं, उनका वही अन्न है—

---

* बाल विल्व को गौ के मूत्र में पीसकर पिष्टी बना ले। फिर उस पिष्टी को तेल और बकरी के दूध के साथ डालकर पकावे। जब केवल तेल रह जाय तो उसे छानकर रख ले। यह तैल कान में डालने से बहिरेपन को हरण करेगा।

आहार है। शरीर को जितने अन्न की, जितने जिस प्रकार के रस की आवश्यकता है, उतना नियमित खाय तो वह कभी रोग ग्रस्त न हो। किन्तु न तो कोई तोलकर ही खाता है और न उसे इसी बात का ज्ञान है कि हमारे शरीर को कितने मधुर, कड़वे, खट्टे, नमकीन चरपरे तथा कसाय रस की आवश्यकता है और न उसे इतना ही ज्ञान है कि किस पदार्थ में कितने रस हैं, अतः वह आवश्यकता से अधिक भी खा जाता है न मिलने पर जितना खाना चाहिये उतना खाता भी नहीं। कितना श्रम करना चाहिये इसका भी उसे ज्ञान नहीं। इसी कारण मिथ्या आहार विहार से लोग रोगी हो जाते हैं। जो लोग रोग का निदान तथा उसकी चिकित्सा जानते हैं, वे विविध प्रकार के दोषों को देखकर उनके अनुसार ओषधि देते हैं तो रोग शान्त हो जाते हैं। समस्त वस्तुयें ओषधि ही हैं। संसार में ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है जो किसी-न-किसी रोग की ओषधि न हो किन्तु जो उनके गुण दोष जानते हैं और जिन्हें यह ज्ञान है कि किस वस्तु के साथ किस वस्तु को कितनी मिलाकर किस रोग पर कैसे दी जाय और फिर उसमें कौन-कौन-सी वस्तुयें पथ्य हैं, कौन-कौन-सी अपथ्य हैं, इन बातों को जो जानते हैं, वे ही भिषग्वर रोगहन्ता-गद-हा-वैद्य हैं। वे रोगों को शमन कराने में समर्थ हैं।

हम पहिले ही बता चुके हैं कि बेल तीन प्रकार के होते हैं। (१) बाल बेल, तरुण बेल, और पक्व बेल। बाल बेल की बेल-गिरी बनती है, जो सभी औषधियों के योग में काम आती है। तरुण बेल की भी बेलगिरी बनती है, उसका मुरब्बा बनता है तथा तोड़कर पाल में पकाकर खाते हैं, शरबत बनाते हैं और भी अनेकों प्रकार से काम में लाते हैं।

कांजी बेल

जैसे उड़द के बड़ों की कांजी होती है, जो कांजी के बड़े

कहलाते हैं। सूरण–जमीकन्द–की भी कांजी बनती है। इसी प्रकार बेल की भी कांजी बनती है। तरुण बेल को छीलकर उसके गोल-गोल छोटे-छोटे टुकड़े बना लीजिये। उन्हें पानी में उबालकर राई के जल में नमक के साथ डाल दीजिये। तीन दिनों में वह खट्टा हो जायगा। यही कांजी का बेल है। यह पाचक होता है, अग्नि को दीपन करता है, हृदय के लिये अत्यन्त हितकारी है, रुचि को बढ़ाता है तथा आमवात का नाशक है।※

बिल्व तैल

२॥ तोला बेल गिरि को ढाई तोला गो मूत्र में पीसकर उसका कल्क (चटनी) बना ले फिर पाव भर तिल के तैल में, एक सेर बकरी के दूध के साथ तथा जल मिलाकर सब वस्तुओं को अग्नि पर चढ़ा दे। मन्द आग से पकाता रहे। पकते-पकते जब सब जलकर तैल मात्र रह जाय तो उसे छानकर कांच की शीशी में रख ले। यह तैल सर्व रोगों में हितकर है। कान में डालने से बहरेपन को नाश करता है। आमवात की पीड़ा में भी हितकर है।+

बिल्व तैल

एक बिल्व तैल का दूसरा योग है। बेल गिरी ४०० तोला लेकर उसे चौगुने पानी में अग्नि पर चढ़ा दे। जब चतुर्थांश रह जाय तो उसे छानकर उस काढ़े में ५ सेर दूध ५ सेर तैल मिला-

---

※ कांञ्जिकेसंस्थितं बिल्वमाग्निसंदीपनं परम्।
हृद्यं रुचिकरं प्रोक्तमामवातविनाशनम्॥
(शा० नि० भू०)

× बालबिल्वाग्नि गोमूत्रे पिष्ट्वा तैलं विपाचयेत्।
साजक्षीरं च नीरं च बाधिर्यं हन्ति पूरणात्॥
(वृ० नि० र०)

कर अग्नि पर चढ़ावे। उसमें ५-५ तोले (१) बेल गिरि, (२) धाय के फूल, (३) कूट, (४) सोंठ, (५) रास्ना, (६) पुनर्नवा, (७) देवदारु, (८) बच, (९) नागरमोथा, (१०) लोध और (११) सेंमर का गोंद इन ग्यारह वस्तुओं को पीसकर इनका कल्क (चटनी) बना ले, उसे भी तैल दूध के साथ काढ़े में डाल दे। फिर सबको मन्द-मन्द अग्नि से पकाता रहे। पकते-पकते सब जलकर केवल तैल रह जाय तब उसे छानकर किसी चिकने बर्तन में रख ले। इस विल्व तैल का योग अत्रिपुत्र—दत्तात्रेयजी—ने बताया है। यह विल्व तैल, संग्रहणी, अर्श तथा अतीसार तीनों पर ही प्रयोग करे। सभी प्रकार के अतिसारों के लिये यह हितकर है।*

इस प्रकार बिल्व के आयुर्वेद शास्त्रों में अनेकों प्रयोग हैं, यहाँ हमने केवल उदाहरण के लिये कुछ ही प्रयोग लिख दिये हैं।

बिल्व के बीज

बिल्व के बीज बहुत ही गुणकारी है, ये बादाम की भाँति बलवर्धक दीपक और पाचक है। बेल के बीजों को बादाम की

बिल्व तैल

* तुलां संकुट्य बिल्वस्य पचेत्पादावशेषितम्।
सक्षीरं साधयेत्तैलं श्लक्ष्णपिष्टैः रिमैस्समैः॥
बिल्वं सधकी कुष्ठं शुण्ठी रास्ना पुनर्नवा।
देवदारु वचा मुस्ता लोध्रमोरच सान्वितम्॥
एतन्मृद्वग्निना पक्वं ग्रहण्यर्शोविकारनुत्।
बिल्वतैलमिति ख्यातमत्रिपुत्रेणभाषितम्॥
ग्रहण्यर्शो विकारे ये स्नेहाः समुपदर्शिताः।
प्रयोज्यास्तेऽतिसारेऽपित्रयाणां तुल्यहेतवे॥

(वृ० नि० र०)

भाँति काली मिरचों के सहित पीसकर पीवे तो बल की वृद्धि हो, तथा ग्रहणी आदि में लाभ करे।

विल्व बीजों का नमकीन

बेल के बीजों को सुखाकर उन्हें दल ले। उसके छिलकों को फटककर अलग कर ले। जो मिंगी का दलिया रह जाय उसे घृत में भूनकर सोंठ, मिरच, पीपल और सेंधा नमक मिलाकर इस नमकीन बेल बीज कचरी को खाय तो पेट के विकारों में तथा हृदय रोगों में हितकर हो। यह नमकीन कचरी स्वादिष्ट तथा लाभप्रद है।

विल्व बीजों का तैल

विल्व के बीजों का जैसे बादाम में से तैल निकालते हैं उसी प्रकार तैल निकाल ले और उस तैल को खाय तथा घुटने आदि अङ्गों में जो वात की पीड़ा होती है उसमें मले तो लाभ करता है। लकवा अर्धाङ्गादि में भी हितकर है।

विल्व के तैल से कायाकल्प

काकचण्डीश्वर कल्पतन्त्र में औषधि कल्पलता में कायाकल्प का यह योग है। पहिले जन्माष्टमी के दिन विल्व के पेड़ के समीप जाय। उसका पूजन करके उससे प्रार्थना करे—"हे विल्वदेव! हम आपके फलों के बीजों से जो तैल बनेगा उससे कल्प करना चाहते हैं, आप हमें आज्ञा प्रदान करें और हमारे इस निमन्त्रण को स्वीकार करें।" इस प्रकार जन्माष्टमी को उसे निमन्त्रण दे आना चाहिये। फिर जब वैशाख में या ज्येष्ठ में फल पक जायँ, तब सब को तोड़ लावे। उनके गूदा को तो बाँट दे या सुखा ले, केवल बीजों को एकत्रित करे। फिर उन बीजों को थोड़ा सुखाकर पीसे और उनका सूक्ष्म चूर्ण बना ले। फिर त्रिफला का काढ़ा बनावे। जैसे डेढ़ छटाँक त्रिफला है तो

उसे आधा सेर जल में चढ़ा दे। जब आधा पाव जल रह जाय तो उसे छान ले। उस काढ़े में उस विल्व बीज के चूर्ण को डाल दे। विल्व बीज चूर्ण जितने में भली-भाँति भीग जायँ उतना काढ़ा बनावे उस भीगे हुए चूर्ण को छाया में सुखा ले। फिर इसी प्रकार काढ़ा बनाकर भिगोकर सुखावे। ऐसे सात बार त्रिफला के क्वाथ में इस चूर्ण की भावना दे।

जब सातवीं बार सूख जाय तब उसमें से यन्त्र से संपीड्यन करके यत्नपूर्वक तैल निकाल ले। फिर उस तैल को घृत के चिकने बर्तन में रखकर उसका मुख ढककर पृथ्वी में गाढ़ दे। एक महीने तक पृथ्वी में गढ़ा रहे। तदनन्तर उसे निकाल ले। उसकी समुचित रक्षा करता रहे। फिर पंच कर्मों द्वारा (वमन, विरेचन, स्वेदन, स्नेहन और वस्ति के द्वारा) शरीर को शुद्ध करके जन्माष्टमी के दिन से या पुष्य नक्षत्र से, चतुर्दशी से अथवा और किसी शुभ दिन से उसका सेवन आरम्भ करे। ऐसे गृह में रहे जहाँ विशेष वायु न लगे। निर्वात स्थान में ही निवास करे। उस तैल में से एक कर्ष (सवा तोला भर) पीवे। अधिक पी लेगा तो मूर्छा आ जायगी, शरीर में दाह होगा, प्यास लगेगी। कण्ठ तथा होंठ सूखने लगेंगे। अत्यन्त कष्ट होगा। उतना पीने पर भी तृषा, कण्ठोष्ठ शुष्कता हो सकती है। उस समय कपिल गौ के दूध में जल मिलाकर बार-बार कुल्ला करने चाहिये। जब वह तैल पच जाय, तब साठी के चावलों को कपिला गौ के दूध के साथ खाना चाहिये। और कोई वस्तु न खानी चाहिये। नमक सर्वथा छोड़ देना चाहिये।

जब तैल का अनुपात के अनुसार पान करे तब वैद्य के द्वारा उस तीव्र वीर्य तैल को सात बार मन्त्र द्वारा मन्त्रित कर लेना चाहिये। मन्त्र यह है। "ॐ नमो वीरजननि स्वाहा।" और इस मन्त्र का जप भी करना चाहिये।

इस प्रकार जो इसका (४० दिन तक) पान करता है उसकी समस्त आदि व्याधि नष्ट हो जाती हैं। वह व्यक्ति श्रुतज्ञ, सौभाग्ययुक्त, श्रीमान, द्युतिमान् हो जाता है। उसके शरीर की समस्त झुर्रियाँ समाप्त हो जाती है, बाल काले हो जाते हैं और सौ वर्ष तक सुखपूर्वक जीवित रहता है।*

---

* श्रीफलकल्पः—कृष्णाष्टम्यां शुचिर्भूत्वा बिल्ववृक्षं निमंत्रयेत्।
माधवेज्येष्ठमासे वा फलात् बीज समाहरेत्॥
विल्व बीजानि संगृह्य सूक्ष्म चूर्णं च कारयेत्।
त्रिफला क्वाथ तोयेन सप्तवारं विभावयेत्॥
ततो यन्त्रेण निष्पीड्य तैलं ग्राह्यं च यन्त्रतः॥
स्निग्धभांडे विनिक्षिप्य भूमौ तं च निधापयेत्।
मासात् परं तमुद्धृत्य रक्षां कुर्यात् विधानतः।
विरेकवमने कृत्वा शुद्ध कोष्ठः शुभे दिने।
कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यां पुष्यर्क्षेऽपि च बुद्धिमान्॥
निर्वातमन्दिरे तैलं कर्षमात्रं पिवेन्नरः।
मात्रातिक्रमतो मूर्च्छा भ्रमोदाहस्तृषापि च॥
कण्ठोष्ठयोः शुष्कता च भवेयुर्भृश दूःखदा।
कपिलाक्षीरमासिच्य गण्डूषं कारयेत्तदा॥
जीर्णान्ते कपिलाक्षीरं षष्ठिकान्नं च भोजयेत्।
तैलस्य सेवनादस्य व्याधिराधिश्च नश्यतः॥
प्रायः सर्वे व्याधयश्च विनश्यन्त्यस्य पानतः।
श्रुतिज्ञः सुभगः श्रीमान् कर्णिकारसमद्युति॥
वली पलितनिर्मुक्तो जीवेद् वर्षशतं नरः।
सप्तभिमन्त्रयित्वातु भिषग्भिव्याधितो नरः॥
पश्चात्तैलमिदं तीव्रवीर्यं मानेन संपिवेत्।
ॐ नमो वीरजनानि स्वाहा—इति मन्त्रं जपेत्॥
(काकचण्डीश्वर कल्पतन्त्रे)

इस कल्प को अशुद्ध कोठे वाले–बिना पंच कर्मों द्वारा शरीर को विशुद्ध न बनाने वालों को नहीं करना चाहिये। उनको उसी प्रकार लाभ नहीं होता जैसे मैले कपड़े पर रङ्ग नहीं चढ़ता। बालकों को भी इसे नहीं करना चाहिये क्योंकि उनकी धातुएँ तो वृद्धि पर हैं। जिनकी अवस्था ढल चुकी है पचास से साठ वर्ष तक के लोगों को कोष्ठ शुद्ध करके करना चाहिये। तथा युवावस्था में भी करना चाहिये।× साठ वर्ष की अवस्था से ऊपर वालों को भी कल्प का विधान नहीं है, क्योंकि उनकी धातुएँ तो क्षय की ओर प्रवर्त हैं उनका मल स्थायी हो गया है उनको भी कल्प से विशेष लाभ नहीं होता। यही नहीं है उन्हें तो और हानि की सम्भावना है।॥ जो नास्तिक हों, कामी, क्रोधी, लोभी, हिंसक, क्रूर हों उनको भी कल्प से कोई लाभ नहीं। जो उदार, परोपकाररत, दानी, सदाचारी, शीलवान्, धैर्यवान्, साहसी और आस्तिक हों उन्हीं के लिये कल्प का विधान है।

साधारण कल्प

ओषधि के रूप में बेल के बीजों का कल्प तो रोगी तथा वृद्ध भी कर सकते हैं। वे इस प्रकार करें। बेल के बीजों को ढाई तीन सेर एकत्रित करें। उन्हें दलकर उनके ऊपर के छिलके को निकाल दें। फिर जो वह विल्व बीजों का दलिया रह जाय उसे एक छटाक खायँ। दाँत हों तो चबा लें, न दाँत हों तो पीसकर खायँ। केवल कपिला काली गौ का ही दूध पीवे। इस प्रकार ४० दिनों तक दूध पर ही रहें। फिर पीछे शनैः-शनैः एक तोले से अन्न बढ़ाते चलें दूध को कम करते रहें। इस प्रकार चालीस दिन में ही अपने पूर्ण आहार पर आवें तो उनके पुराने रोग जैसे

+ पूर्वे वयसिमध्ये च शुद्धकाय समाचरेत्। (चरक सं०)

॥ जरापक्व शरीरस्य व्यर्थमेव रसायनम्। (चर०)

गठिया है, अर्श है, मन्दाग्नि है, ये सब रोग प्रायः नष्ट हो सकते हैं। बिल्व के बीजों में बहुत से गुण हैं।

बिल्व के कांटे

बिल्व के वृक्ष पर जो बड़े-बड़े कांटे होते हैं उनकी माला बनाकर स्कन्ध रोग के प्रतिषेध के निमित्त पहिनने का विधान है।❀

इस प्रकार विल्ववृक्ष के सभी पदार्थ जैसे (१) जड़, (२) वल्कल, (३) पत्र, (४) पुष्प, (५) कच्चे फल, (६) पक्के फल, (७) बीज, (८) कांटे, (९) लकड़ी तथा (१०) छाया सभी पुण्यप्रद रोगनाशक तथा सभी प्रकार से हित करने वाले हैं। पके फल भी बड़े हितकारी हैं ज्येष्ठ के दशहरा तक के। इस विषय में कविराज पं० राधावल्लभजी पन्त ने अपने अनुभव की दो घटनायें सचित्र आयुर्वेद में दी हैं, उन्हें हम पाठकों के हितार्थ यहाँ उद्धृत करते हैं—वे लिखते हैं—

हमारे मकान में दो बेल के पेड़ हैं। एक आगे के दालान में तथा दूसरा दो गज के फासले पर सड़क के किनारे तथा चहारदीवारी के बाहर। सड़क के किनारे वाले में फल छोटे, कम, छिलका मोटा तथा स्वादहीन। तीसरा पेड़ दस बारह गज के फासले पर है। इसमें फल बहुत बड़ा लगता है। पर छिलका इसका भी मोटा तथा खाने में स्वादहीन, सुगन्धि भी अपेक्षाकृत कम ही है। तीनों वृक्षों के फलों में जो बाहरी दालान का वृक्ष है उसके फल औसत दर्जे के (न बहुत बड़े, न बहुत छोटे) हैं। छिलका पतला एवं सुगन्ध मनोहारिणी है। एक घटना का विव-

---

❀ स्कन्ध प्रतिषेधार्थं बिल्वकण्टकम्।
बिल्वकण्टकान् ग्रथितान्येव धारयेत् ॥
(उ० २८ अ०)

रण देता हूँ—इधर तीन-चार माह से मेरे सर्वाङ्ग में पीड़ा रहती थी। अनेक औषधियों का प्रयोग किया गया यथा ऐरण्ड स्नेह का लगातार एक-डेढ़ माह तक। मुझे इससे बड़ा लाभ होता है। मैं मृदु कोष्ठ हूँ। ऐरण्ड-स्नेह एक या दो तोला लेने के एक घण्टा बाद एक टट्टी खुलकर आ जाती है तथा शरीर को हल्का अनुभव करने लगता हूँ। परन्तु इस बार किसी प्रकार का लाभ न हुआ। नौभलजीन आदि औषधि का भी प्रयोग किया गया लेकिन कोई लाभ न हुआ।

मैं प्रथम मञ्जिल में रहता हूँ अतः विल्व मुझे कभी प्राप्त नहीं होता है। इधर-उधर के लोग उठाकर ले जाते हैं। २४ अप्रैल १९७५ को प्रातः ११ बजे फाटक में घुसते ही ताजा बेल गिरा तो मैं उठा लाया। बड़ी उत्तम सुगन्धि आ रही थी, शीतल भी था। आधा बेल मैं बीजों के खा गया। मेरे शरीर में जो एक प्रकार की हर समय पीड़ा लगी रहती थी खाट में लेटने पर करवट लेना भारी होता था ना मालूम-सी रह गयी।

सायंकाल शेष आधा बेल भी खा गया। २६ अप्रैल को मेरी पत्नी को फाटक में प्रवेश करते ही १२-१२॥ बजे के लगभग बेल मिला, दिन की गर्मी के कारण बेल बड़ा गर्म हो रहा था, सुगंधि भी आ रही थी, मैं गरमागरम खा गया तथा आधी रात्रि ११-११॥ बजे के लगभग शेष आधे को भी खा गया। सर्वाङ्ग पीड़ा जो मुझे प्रत्यह लगी रहती थी अब बिलकुल नहीं है।

विल्व के सेवन से एक अनुभव यह भी हुआ कि मल-मूत्रादि अल्प मात्रा में निकलते हैं। अर्थात् किसी प्रकार की हानि नहीं होती। क्षुधा, तृष्णा, मल-मूत्रादि किसी वेग का अनुभव भी नहीं होता, तृप्ति बनी रहती है। कामोत्तेजना को रोकता है। अन्य भुक्त पदार्थों को पचाता है। मनः कम्प में हित है, चित्त वृत्तियाँ एकाग्र स्थिर रहती हैं। सुशीला रर वर्षीय अनेक वर्षों से

सर्वाङ्ग शोथ, शरीर में भारीपन, सर्वाङ्ग पीड़ा—अनेक चिकित्सा की गई कोई लाभ नहीं हुआ। इनको हरे ताजे विल्वपत्र पच्चीस, कालीमिर्च पच्चीस (काली मिर्चों को लोटा भर जल में डाल देता हूँ। जो जल में डूब जाती हैं उनको निकाल सुखाकर पच्चीस दाने लेता हूँ) का क्वाथ प्रातः एक बार ही तीन मास तक प्रयोग किया अन्य औषधि कुछ नहीं दी। इससे सब उपद्रव शान्त हुए। द्वितीय रोगी—इनके दाहिने पाँव की एड़ी में बड़ी पीड़ा हुई। तीन-चार दिन पड़े रहे, तत्पश्चात् इर्विन अस्पताल में दिखाया। अस्थि विशेषज्ञ ने एक्सरे देखकर बतलाया कि अस्थि बढ़ रही है। इसकी कोई चिकित्सा नहीं। छै मास तक होमियो-पैथिक चिकित्सा की परन्तु कुछ लाभ नहीं हुआ। इनको भी चार माह उपरोक्त प्रयोग किया। अस्थिशोथ सब साफ हो गया। शोथ, पीड़ा आदि उपद्रव भी शान्त हो गये। यहाँ यह बताना उचित समझता हूँ कि विल्व के विषय में 'शोथहारणों' तथा 'त्रिदोष शोथहर' कहा गया है तथा बिल्व के नामों में एक नाम 'अरिमेद' आता है जिसका अर्थ वसाशत्रु है। श्रीमती ज्ञानविनोद ५४ P. B. ४८२ Nansori figi—१९५२ में युद्रस तथा एपैन्डिक्स की शल्य चिकित्सा। १९५५ में इन्टस्टा इनलमिसैन्ट्रिक थ्रौम्बे-सिस के कारण बारह फीट क्षुद्रान्त्र शल्य चिकित्सा द्वारा निकाल दी। १९६२ में सीजेरियन ऑपरेशन द्वारा पुत्री हुई मर गई। १९६३ में पुनः सीजेरियन ऑपरेशन द्वारा पुत्री हुई। सब शल्य क्रियायें फीजी में ही हुईं। १९६६ में स्टैरेलाइजेशन किया गया। यह हवाई में हुआ। १९५५ में बारह फीट आंत के निकालने के बाद से बेहोशी में (शल्य क्रिया के पश्चात्) ट्यूब लगाकर रखा गया। लगातार टट्टी होती रहती थी। होश आने पर पन्द्रह-पन्द्रह मिनट बाद टट्टी होती रहती थी। उसके पश्चात् घण्टे यह क्रम मेरी चिकित्सा के पूर्व तक चला आ रहा था। इसके लिये

अनेक औषधियों का व्यवहार किया Lomotil का व्यवहार हर समय करती थी।

डाक्टरों ने कहा कि आप जीवित हैं। इसी पर सन्तोष करें। बारह मई १९७८ को भारत आये। ११-६-७९ से मेरी चिकित्सा में हैं दिन-रात टट्टी जाने में ही समय व्यातीत होता था। सिनेमा आदि किसी भी जगह जाने में असमर्थ।

मैंने श्रीफल चूर्ण तीन-तीन माशा तीन मात्रा प्रतिदिन के हिसाब से आठ दिन की चौबीस मात्रा लीं जल के साथ। इससे आश्चर्यजनक लाभ हुआ। प्रथम दिन ही रात्रि भर आराम से सोईं।

किसी प्रकार का अन्य कोई परहेज नहीं करवाया जो कुछ भोजन करती थीं सब पूर्ववत्। इनके पति श्री बिनोदजी का कहना है कि मैं हैरान रह गया कि एक ही दिन में ही इतना शीघ्र परिवर्तन इतने पुराने रोगी में हो सकता है। जब कि अच्छे-अच्छे विशेषज्ञों की चिकित्सा की। यहाँ शास्त्रकारों का यह पद 'मणिमन्त्रौषधीनांमचिन्त्यः प्रभावः' अक्षरशः ठीक बैठता है।

हमारे आश्रम में एक हिन्दी के प्राध्यापक पं० मुरलीधरजी पांडेय हैं। उन्हें ८-९ मास तक भयङ्कर संग्रहणी हो गई थी। वे जीवन से भी निराश हो चुके थे। उन्होंने ४४ दिन तक केवल बेल और दूध का ही कल्प किया और पूर्ण स्वस्थ हो गये। उनके ही द्वारा उनकी रोग निवृत्ति की कथा सुनिये। वे लिखते हैं—

मेरे दौहित्य पङ्कज की अकाल मृत्यु के शोक के कारण—मैं बीमार पड़ गया, अगस्त ७९ में मुझे भयङ्कर संग्रहणी ने आत्मसात् कर लिया। सारे वैद्यों एवं डाक्टरों के पूर्वानुभूत समस्त योग-प्रयोग औषधि विज्ञान, पथ्य विवेक आदि सभी कुछ नगण्य

सिद्ध हुए। उसका कारण यह था कि आयुर्वेद में शोक से उत्पन्न होने वाली संग्रहणी सदा असाध्य मानी गई है।

"शोकोद्भवातु या ग्रहणी सा असाध्य मता बुधैः।
तारुण्ये ग्रहणी साध्या जरायां न कथंचन॥"

इस प्रकार लगभग आठ महीने अनवरत चिकित्सा में बीत गये, किन्तु केवल निराशा ही हाथ लगी।

अब मेरा रुग्ण शरीर, संग्रहणी-जर्जर-काया, अत्यन्त कृश, दुर्बल, श्यामल किं वा नितान्त शिथिल हो गया। देखने वालों को मेरी ओर देखने का साहस नहीं होता था, मेरी ओर देखने वालों की आँखें अमन्द करुणा से बरबस सजल हो जाती थीं, उनके अन्तःकरण दया से द्रवित हो जाते थे। एक प्रकार से मैं मृतप्राय हो चुका था। अहर्निश शौच जाना ही मेरा एकमात्र व्यापार बन गया था। तब श्री महाराजजी ने कहा—"तुम बिल्वकल्प करो। पके बेल ले आओ, उसका गूदा खाकर ऊपर से गाय का कुनकुना दूध पी लो। जब-जब तुम्हें भूख लगे तुम इसी प्रकार बेल और दूध का प्रयोग करते जाओ। अथवा पके बेल के गूदे को दूध में मसलकर हल्की चीनी मिलाकर उसे पी लिया करो।"

ध्यान रहे पंडितजी!" बिल्वकल्प में केवल बेल और दूध के अतिरिक्त अन्य किसी भी पदार्थ, वस्तु या द्रव्य का लेश-मात्र भी प्रयोग वर्जित है। पंडितजी! ऐसे पथ्यपूर्वक चालीस दिन तक बिल्व सेवन करने से तुम पूर्णतः उदर व्याधि (संग्रहणी) से मुक्त होकर पहले की भाँति स्वस्थ्य और निरोग हो जाओगे।"

भाग्य ने साथ दिया, बुद्धि अनुकूल हुई पूज्य चरण के आदेशानुसार अपथ्य वर्जन पूर्वक पथ्य का सम्बल लिये हुए महा-

राज श्री की आज्ञा से उन्नीस मार्च अस्सी से (१९ मार्च ८० से) मैंने विल्वकल्प चिकित्सा आरम्भ की।

लगभग तेरह दिनों बाद पहली अप्रैल को स्वस्थ्यता एवं आंशिक व्याधि-मुक्तता की, स्पष्ट अनुभूति ने प्रथम बार मुझे प्रहर्ष-पुलक एवं प्रफुल्लता से भर दिया। मेरे शरीर का प्रत्येक अङ्ग शनैः-शनैः अभिनव-आभा से निखार पाने लगा। क्षुधा के साथ-साथ क्रमशः दूध बेल की मात्रा भी वृद्धि पाने लगी।

इस प्रकार कई बार में मैं चार किलो दूध एवं ६ या ७ बेलों का प्रतिदिन प्रयोग करने लगा। चालीस के स्थान पर ४४ दिनों का बिल्वकल्पव्रत प्रसन्नतापूर्वक पूर्ण किया।

परिणाम स्वरूप संग्रहणी रूप असाध्य उदर विकार से मुझे पूर्ण मुक्ति मिल गई। मैं पहिले की भाँति पूर्ण स्वस्थ्य, निरोग तथा पर्याप्त शक्ति, स्फूर्ति सम्पन्न बन गया। पूज्य चरण की कल्पनातीत करुणा कृपा से मुझ मृतप्राय को एक अमृतमय 'नवजीवन' प्राप्त हो गया।

मेरे विद्यालय के एक उर्दू अध्यापक तो एक दिन बीमारी के बाद स्वस्थ्य होने पर मुझे देखकर विस्मय-विमुग्ध हो, अकस्मात् कहने लगे—"वल्लाह पंडितजी ! आपने कौन-सी गिजा खाई है ? कसम खुदा की आपके चेहरे पर तो सुर्खियें नजर आ रही हैं, आपके चेहरे पर शिकन नहीं है, झुर्रियों का तो नामोनिशान तक मिट गया, वल्लाह ! गजब है।"

इस प्रकार मुझे स्वस्थ्य पाकर, मेरे परिजनों, पुरजनों, प्रेमी-जनों एवं आश्रमवासीजनों के आनन्दोल्लास का ठिकाना नहीं रहा। विल्व के सम्बन्ध में एक स्वरचित श्लोक देकर मैं इस वक्तव्य को समाप्त करता हूँ।

अभाव ग्रस्तानामुपनगर ग्रामेषु वसताम्।
जनानां सौम्यानां सरल प्रकृतीनां सुखकरः॥
विनाभेदं निम्नोत्तमजन महाव्याधि शमनः।
अये मालूर! त्वं निखिल तरुमौलिविजियताम्॥

इस प्रकार मैंने बहुतों पर बेल का प्रयोग किया और प्रायः सभी को लाभ हुआ। विशेषकर उदर के रोग अर्श, अतिसार और संग्रहणी की तो बेल रामवाण ओषधि है।

छप्पय

दूध बेल ही लेउ और सब भोजन तजिकें।
भूख प्यास जब लगे दूध पीयो रचि पचिकें॥
दूध गाय को होय और को दूध न पीओ।
गौ को अम्मृत दूध मातु सम पीकें जीओ॥
उदर रोग नसि जायंगे, नई ज्योति जग जायगी।
विधिपूर्वक सेवन करो, आयु बुद्धि बढ़ि जायगी॥



बिल्व वृक्ष लगाने का माहात्म्य

[८]

विल्वादि पालनं कुर्यात् शुभं भयदमन्यथा ।
श्रीवृक्षान् रोपयेत् पञ्च यदि स्वर्गान्न हीयते ॥ *

(वह्निपुराणे)

छप्पय

सदा स्वरगमें बास करें यदि इच्छा तुमरी ।
पाँच बेलके पेड़ लगाओ शिक्षा हमरी ॥
बिल्ववृक्ष बन जहाँ-तहाँ काशीही जानो ।
पाँच बिल्व जहँ होयँ विष्णु थिति तहँपै मानो ॥
सात बिल्वद्रुम जहाँपै, दुर्गासँग शिव बसत तहँ ।
दश जहँ गण सँग शम्भु नित, एकहु हरिहर रहत तहँ ॥

लोग वंश चलाने के लिये पुत्रों को उत्पन्न करते हैं, किन्तु यदि पुत्र अधार्मिक दुराचारी कुपुत्र निकल जायँ तो पितरों को नरक में ले जाने वाले होते हैं। यदि वृक्षों को लगावे तो वे पुत्रों से भी अधिक पुण्यप्रद होते हैं। एक पीपल का वृक्ष लग दे तो वह पितरों को तार देता है। वर्षा का जल पीपल के पत्तों से

---

* विल्व आदि वृक्षों का पालन करना चाहिए। इनका पालन करना मंगलदायक है, जो पालन न करके इनका छेदन करते हैं उनको भय देने वाले हैं। तुम यदि चाहते हो कि हमारा स्वर्ग से पतन न हो अर्थात् हम सदा स्वर्ग में बने रहें तो पाँच वृक्ष बेल के लगा दीजिये।

गिरता है मानों वे लगाने वालों के पितरों का तर्पण करते हैं। उनके फलों को जो लाखों पत्ती खाते हैं वही मानों श्राद्ध है असंख्य जीवों का भण्डारा होता है। इसलिये बहुत से वृक्ष लगाने चाहिये उनका पुत्र की भाँति पालन करना चाहिये। वे वृक्ष पत्र, पुष्प, फल, छाया, मूल, वल्कल तथा अपनी लकड़ियों द्वारा सदा परोपकार करते रहते हैं और लगाने वाले के पितरों को भी तार देते हैं। जो उन्हें काटता है उसे भी वे छाया, पुष्प तथा फल आदि देते हैं। जैसे ऋषि मुनि द्वेष रहित होते हैं, वैसे ही वृक्ष भी द्वेष रहित होते हैं, ढ़ेला मारने वाले को भी फल देते हैं, ऐसे वृक्षों की पूजा करनी चाहिये। ※

बहुत वृक्ष यदि न लगा सके तो कम-से-कम २४ वृक्ष अवश्य लगादे। १ पीपल वृक्ष, १ पिचुमर्द (नीम) १ वट वृक्ष, दश फूल वाले (जैसे गंधराज, गुलाब, जपा आदि) २ अनार के २ मातु-

---

× तस्मात् सुबहवो वृक्षा रोप्याः श्रेयोऽभिन्छता।
पुत्रवत् परिपाल्याश्च ते पुत्रा धर्म्मतः स्मृताः॥
किं धर्मविमुखैर्म्मर्त्यैः केवलं स्वार्थ हेतुभिः।
तरुपुत्रा वरं ये तु परार्थैकानुवृत्तयः॥
पत्रपुष्प फलच्छाया मूलवल्कल दारुभिः।
परेषामुपकुर्व्वन्ति तारयन्ति पितामहान्॥
छेत्तारमपि सं प्राप्तं छायापुष्पफलादिभिः।
पूजयन्त्येव तरबो मुनिवद् द्वेषवर्जिताः॥
पितरं नोपहिंसन्ति द्रुमा द्रविणलोभतः।
तारयन्ति च मे सम्यक् सर्व्वस्यातिथ्यदायकाः॥
तस्मात् ते पुत्रवत् स्थाप्या विधिवद् द्विजपुङ्गव!
द्विजैः पितृमनुष्याणामभोज्याः स्युर्यदा सदा॥
(वह्निपुराण के तड़ाग वृक्ष प्रशंसाध्याय में)

लुङ्ग जम्बमीरी नीबू , ५ वृक्ष आम के । इस प्रकार चौबीस वृक्ष तो अवश्य लगाने चाहिये । इन वृक्षों को लगाने वाला नरक में नहीं जाता । जैसे सुपुत्र कुल का उद्धार करता है, उसी प्रकार भली भाँति जलादि से सींचे हुए फल पुष्प वाले वृक्ष अपने लगाने वाले स्वामी का नरक से उद्धार करते हैं । ×

वृक्ष लगाने के भी नियम हैं, कौन-सा वृक्ष घर में लगाना चाहिये कौन-सा घर के बाहर लगाना चाहिये । कौन वृक्ष घर के किस भाग में किस दिशा में लगावें । किन्तु विल्ववृक्ष, कटहल, जम्बीरी नीबू और बेर ये सर्वत्र लगाने शुभप्रद माने गये हैं । बथुआ, कार, विल्व, बैंगन लता वाले फल जैसे निनुआ, कोहड़ा लोकी आदि इन्हें घर में लगाओ अथवा बाहर सर्वत्र शुभ प्रद हैं । ❀ किन्तु पूर्वभाग में प्रजा को देने वाले और दक्षिण में धन देने वाले होते हैं ।

इन सब वृक्षों में विल्व का माहात्म्य अत्यधिक माना गया है, क्योंकि विल्ववृक्ष तो साक्षात् शंकरजी का ही स्वरूप है । जहाँ पाँच विल्व वृक्ष हों वहाँ मानो स्वयं साक्षात् श्रीहरि ही विराजते हों । जहाँ सात विल्व के वृक्ष हों वहाँ दुर्गा सहित स्वयं

× अश्वत्थमेकं पिचुमर्द्दमेकं न्यग्रोधमेकं दशपुष्यजातीः ।
द्वे द्वे तथा दाड़िममातुलुङ्गे पञ्चाम्ररोपी नरकं न याति ॥
यथा सुपुत्रः कुलमुद्धरेद्हि तथातिकृत् स्नान्नियम प्रयत्नात् ।
तथात्र वृक्षाः फलपुष्पभूताः स्वं स्वामिनम् नरकादुद्धरन्ति ॥
(वाराह पुराणे गोकर्णमाहात्म्यनामाध्याये)

❀ शुभप्रदश्च सर्वत्र सुरकारो निशामय ।
विल्वश्च पनश्चैव जम्बरो वदरी तथा
प्रजाप्रदश्चपूर्वस्मिन् दक्षिणेधनस्तथा ॥
 (ब्रह्मवैवर्ते)

श्री शम्भु भगवान् विराजते हैं। जहाँ भी विल्व का वृक्ष हो वहाँ हरि और हर दोनों विराजते हैं। जहाँ दश विल्व वृक्ष हों वहाँ भगवान् शंकर अपने गणों के सहित विराजते हैं। वहाँ सम्पूर्ण तीर्थ, देवता ४९ मरुद्, सब विराजते हैं। जिस गृहस्थ के घर में ईशान कोण में विल्व का वृक्ष हो, वहाँ किसी भी प्रकार की विपत्ति नहीं हो सकती। घर की पूर्व दिशा में विल्ववृक्ष हो तो वह सुख देने वाला होता है। घर के दक्षिण में तो यमराज के भय को दूर करने वाला है। पश्चिम में हो तो प्रजा की वृद्धि करने वाला होता है।

विल्व का वृक्ष तो चाहे स्मशान में हो, चाहे नदी तीर में हो, चाहे ग्राम में हो या वन में विल्ववृक्ष कहीं भी क्यों न हो उसके नीचे सिद्धपीठ मानी जाती है। विल्व के वृक्ष को घर के आँगन के बीच में न लगावे। यदि दैवयोग से अपने आप ही आँगन के बीच में उपज आवे तो उसकी साक्षात् शिवजी को भाँति पूजा करनी चाहिये। चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ इन चार महीनों में भगवान् श्री शंकर को जो एक भी बेल पत्र चढ़ाता है तो उसे एक लाख गौदान का फल होता है। जो मध्याह्नकाल में बेलवृक्ष की प्रदक्षिणा करते हैं, उन्होंने मानों सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करली हो। विल्व के वृक्ष को काटना नहीं चाहिये। उसकी लकड़ी को जलाना भी नहीं चाहिये। जहाँ वहुत से विल्व वृक्षों का वन हो वह तो मानों साक्षात् काशीपुरी ही है। *

इस प्रकार पुराणों में विल्व वृक्ष लगाने का बड़ा माहत्म्य है।

---

* पञ्चविल्वद्रुमा यत्र तत्र तिष्ठेत् स्वयं हरिः।
सप्त विल्वद्रुमा यत्र तत्र दुर्गायुतोहरः॥
एको विल्वतरुर्यत्र तत्र शम्भुर्म्मयासह।
विल्व वृक्षा यत्र दश तत्र शम्भुर्गणैः सह॥

विल्व के वृक्ष छोटे बड़े फलों वाले कई प्रकार के होते हैं। एक बेल तो ऐसे होते हैं, जिन्हें खाने से घुमनी आती है। वे खाने में भी कड़वे होते हैं, ऐसे बेल के फलों को नहीं खाना चाहिये। जैसे बेल का बीज बोओगे वैसे ही फल वाला पौधा होगा। प्रयाग के पास जो दुर्वासा आश्रम है, उसके जमुनी कुटवा दो गाँव हैं। कुटवा में एक बेल का वृक्ष था। उस पर बहुत से बड़े-बड़े दो-दो सेर के विल्व फल लगते थे। उसी के बीज लाकर हमने बोये। फल तो उसमें आये किन्तु उतने बड़े नहीं लगे। स्वाद में तो वे मीठे हैं।

एतान्युक्तानि तीर्थानि देवाः सर्वे मरुद्गणैः।
यत्र वाटयां गृहस्थस्य कोण ईशान नामके॥
जायते श्रीफलतरुर्न तत्र विपदः क्वचित्॥
पूर्व्वस्यां सुखदः स स्याद् दक्षिणे यमभीतिहा।
पश्चिमे च प्रजादायी वृक्षो विल्व उदाहृतः॥
श्मशाने च नदी तीरे प्रान्तरे वा वनान्तरे।
विल्ववृक्षतलं प्रोक्तं सिद्धपठस्थलं सुधीः॥
न मध्य प्राङ्गणे वृक्षँ स्थापयेत् श्रीफलाख्यकम्।
दैवाद् यदि प्रजायेत तदा शिववदर्च्चयेत्॥
चैत्रादि चतुरो मासान् शम्भवे परमात्मने।
दत्तं स्याद् विल्वपत्रैकं लक्षधेनुसमं सुराः॥
मध्याह्नकाले ये मर्त्या विल्वं कुर्य्युः प्रदक्षिणम्।
तैः सुमेरुर्गिरिवरः कृत एव प्रदक्षिणम्॥
न च्छिन्द्यात् श्रीफल तरुं न दहेत् काष्ठमेवच।
बिनाब्राह्मण यज्ञार्थं पतितो विल्व विक्रमी॥
विल्ववृक्ष वनं यत्र सातु वाराणसीपुरी।

(वृहद्धर्म पुराणे विल्ववृक्षमाहात्म्यं ११ अध्याय)

हम अपना पूजा मंदिर बनवा रहे थे। उसके बीच में एक विल्व का छोटा पेड़ था। हमने उसे निकाला नहीं मंदिर के बीच में ही वह रह गया। भगवान् के सिंहासन के नीचे ही हमने उसकी पक्की आलवाल–थामरा–बना दिया। जब बड़ा हुआ तो दक्षिण की ओर की दीबाल फोड़कर उसे बाहर निकाल दिया। पूजा का जो चंदन आदिका जल होता है, मैं उसी में डालता जाता हूँ। वह बहुत भारी वृक्ष बन गया। त्योरससाल उसमें एक बेल लगा। लगभग डेढ़ दो सेर का होगा। बहुत बड़ा बेल था। पारसाल ६ लगे अत्यन्त स्वादिष्ट सुगन्धियुक्त। जिन्होंने खाया वे ही उसकी प्रशंसा करते थे। अद्भुत स्वाद था उसमें। हमारे मंदिर के भीतर बेल को देखकर सभी आश्चर्य करते हैं। अब की वाढ़ में हमारी दक्षिण ओर की चहार दीवारी गिर गयी। हमने देखा वेल की बड़ी भारी जड़ें दूर तक चली गयी हैं। हमारे मंदिर के भी आस पास ५ विल्व के पेड़ हो गये हैं बड़े होने पर हमारा पूजा मंदिर सब ओर से विल्व वृक्षों से ढक जायगा। और भी पचासों विल्व के वृक्ष हमने आश्रम के विभिन्न स्थानों में लगाये हैं। कुछ अभी छोटे हैं कुछों पर फल आने लगे हैं।

श्री धाम वृन्दावन में हमने एक वर्ष का गोव्रत किया था। उसमें हम केवल गौ का दूध ही पीते थे। गौओं के बीच में रहते थे और यमुना के उस पार गौओं को चराने ले जाते थे, दिन भर वहीं रहते थे। वहाँ पहिले घोर हींस,–शमी–तथा अन्य काँटेदार वृक्षों की सघन झाड़ी थी उसमें लगभग दो हजार जंगली सूअर रहते थे। लगभग हजार जंगली गौएँ। मुसल्मानी शासन में लोग वहाँ सूअरों की आखेट करने आते थे। अंगरेजों के काल में एक अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन चला। उस जंगल को भी खेत बनाने की योजना चली। तो स्याही मारने

वालों को बुलाकर सब जंगली सूअर मरवा दिये। मारवाड़ के जो लाल पगड़ी वाले हजारों गौओं को लेकर चराने वाले आते हैं वे उन गौओं को अपनी गौओं में मिलाकर ले गये। झाड़ियों को काट कर खेत बनाये गये। एक कृषि संस्था बनी। उसने खेतों को सरकार से ऋण लेकर बोया। किन्तु वह संस्था चली नहीं। सरकार ने उन खेतों को बेच दिया। कुछ वृन्दावन की गौशाला वालों ने ले लिये कुछ अन्य लोगों ने।

हम जब गौ चराने जाते थे तब ज्येष्ठ-वैशाख की धूप में कहीं बैठने को एक भी वृक्ष नहीं था। ढ़ढ़ते-ढ़ढ़ते एक शीशम का वृक्ष मिला उसी के नीचे हमने एक गुफा बना ली उसी में पड़े रहते, गौएँ चरती रहतीं। फिर वहाँ पचास एकड़ भूमि लेकर गोलोक बनाया। गोव्रत के अन्त में डेढ़ महीने तक बहुत भारी उत्सव हुआ। फिर वहाँ दो पंचवटी लगायी अनूपशहर के एक लालाजी आ गये। उनकी सहायता से १८०० पेड़ बेल के लगाये। तभी यमुना जी में भयंकर बाढ़ आयी। प्रतीत होता है, यमुनाजी को भी कुछ उदर विकार हो गया होगा। इसलिये वे हमारे सब विल्व के वृक्षों को ले गयीं। लगभग ५०/१०० बेल के पेड़ अभी हैं, वे फल देते हैं किन्तु जैसे चाहिये वैसे फल वे पेड़ देते नहीं। हमारे योगिराज देवरहा बाबा जी भी बेलों का सेवन करते हैं। जब माघ में यहाँ प्रयागराज आते हैं, तो अपने सकीर्तन भवन से बेल मंगाते हैं और वृन्दावन में जब रहते हैं तो गोलोक से मँगाते हैं।

अब हमें अनुभव हुआ। गोलोक बेलों के लिये अनुकूल स्थान नहीं है, वहाँ पहिले कभी यमुनाजी की धारा बहती थी। अब थोड़ी मिट्टी पड़ गयी है, तो खेत होने लगे हैं। बाढ़ आने पर पूरा गोलोक डूब जाता है गौएँ दूसरे स्थान पर ले जाते हैं। कहीं एक हाथ नीचे कहीं दो हाथ नीचे बालू ही बालू है। बेल के

वृक्षों की जड़ बहुत गहरी और दूर तक जाती है। इसीलिये जब जड़ बालू में जाती है तो वृक्ष सूख जाते हैं। प्रति वर्ष दो चार पेड़ सूख जाते हैं। हम वहाँ विल्व वन लगाना चाहते थे। विल्व वन नाम का स्थान गोलोक के समीप ही है। किन्तु वहाँ विल्व का एक भी वृक्ष नहीं। गोलोक में तो ५०।६० पेड़ अभी भी विद्यमान हैं।

देहली में भी बसन्त विहार के पास बसन्त गाँव में हमारा एक आश्रम है। उस समय वहाँ से दिल्ली १३ मील थी। हमारा आश्रम घोर वन में बसन्त गाँव के समीप था। उस समय कोई आदमी दिन में भी वहाँ आने से भय खाता था। हमारी कुटिया से सम्बन्धित ८ बीघा भूमि थी। नीचे बड़ा सुन्दर सरोवर था। हमारी इच्छा थी, सरोबर को पक्का बनवाकर उसके चारों ओर घाट बनवा दें। आश्रम के पीछे बड़ी सुन्दर गोवर्धन की भाँति पहाड़ी है। उसमें विल्ववृक्षों का वन लगा दें। १०।१५ विल्व के पेड़ आश्रम के आस पास लगाये भी थे वे अब बड़े हो गये हैं। फिर शनैः शनैः देहली बढ़ने लगी। बढ़ते-बढ़ते हमारे बसन्त गाँव तक आ गयी। सड़कें बन गयीं। कोठियाँ बन गयीं। चार पाँच महाविद्यालय (कालेज बन गये) जहाँ घोर जंगल था वहाँ बसन्त विहार नामक उपनगर (कालोनी) बन गयी। सुनते हैं, भारतवर्ष में ही नहीं। ऐसिया भर में ऐसा सुन्दर भव्य उपनगर (कालोनी) नहीं है। यह सब मेरे देखते-देखते १५।२० वर्ष में ही सब कुछ हो गया। अब तो दिल्ली हमसे भी सात आठ मील आगे पालम हवाई अड्डे से भी आगे तक चली गयी। हम दिल्ली के बीच में आ गये। गुड़गाँव तक दिल्ली फैल गयी।

हम प्रयाग में थे। सरकार ने हमारी ८ बीघा भूमि अधिग्रहण (इक्वायर) करली। गाँव वालों को ४ रुपया गज क्षति पूर्ति के दे दिये। हमसे पूछा तक नहीं गया। हमारा आश्रम छोड़ दिया। वैसे

अधिग्रहण तो उसका भी कर लिया था। हम भगवत् इच्छा समझकर चुप रहे। हमारा नियम है, हम अपनी ओर से न्यायालयों में नहीं जाते। कोई बलपूर्वक पकड़ ले जाय तो दूसरी बात है।

इसके पश्चात् जनता पार्टी का शासन आया। मैंने जनता पार्टी के सांसदों, बहुत से मंत्रियों को आश्रम पर बुलाया। सबने आश्रम को सरोवर को देखा। मैंने सब मंत्रियों के सामने तत्-सम्बन्धी एक मंत्री से कहा— देखो, कितना भव्य स्थान है। समस्त देशी-विदेशी यात्री इसी राजपथ से निकलते हैं प्रधान मंत्री तथा अन्यान्य मंत्री गण प्रति दिन विदेशी अतिथियों का स्वागत करने उन्हें विदा करने इसी पथ से आते जाते हैं। आप लोग इस सरोवर को वन विहार का मनोरंजन स्थल बनवा दीजिये। उन्होंने कहा–मैं प्रयत्न करूँगा। मैंने कहा–'प्रयत्न करूँगा' का तो अर्थ है नहीं बनवाना। तुम प्रतिज्ञा करो कि बनवा दूगा।"

उन्होंने सबके सामने कहा—"हाँ बनवा दूँगा।"

एक वर्ष हो गया कुछ भी नहीं किया। तब मैंने आदमी भेजा। कहा–मैं भूल गया अब करता हूँ तब करता हूँ। ऐसे टालते रहे। बात यह है जनता पार्टी वाले स्वयं ही आपस में लड़ते रहे ५। ६ दलों की साझे की सरकार थी। साझे का काम तो ऐसा ही होता है। कहावत है—

काँटो बुरो करील को, अरु बदरोटी घाम।
सोवि बुरी कच्चे चून की, अरु साझे को काम॥

आपस में ही एक दूसरे को बुरा भला कहते। लड़ते झगड़ते २॥ वर्ष में जनता पार्टी चली गयी। फिर से कांग्रेस आई आ गयी। जनता पार्टी वाले विखर गये। आपस में फूट पड़ने से कुछ भी न कर सके।

अब के हम गये तो देखते क्या हैं हमारा तालाब भी पाटा जा रहा है। आश्रम के नीचे की भूमि में भवन बनाये जा रहे हैं। हमारा एक बड़ा भारी पीपल का वृक्ष था जिसकी गाँव वाले पूजा करते हैं मृतकों के घंट उसी पर लटकाये जाते हैं। उसे भी काट रहे हैं। तब मुझे बड़ा बुरा लगा। मैंने आवास मंत्री को उप राज्यपाल को लिखा। कहीं सुनवायी नहीं हुई तो प्रधान मंत्री को लिखा। तब योजना बनाने वाले अधिकारी मेरे पास आये कहा—आपका तालाब अब नहीं पाटा जायगा। पीपल भी नहीं गिराया जायगा। यद्यपि वह चारों ओर से मिट्टी छाँट-छाँट कर खोखला कर दिया है। आँधी आने पर गिर सकता है यदि चारों ओर से दीवाल बनाकर उसे रोका न जाय। किन्तु सरकार को हिन्दुमान्यता का तनिक भी ध्यान नहीं है। ईसाई मुसलमानों के स्थान होते तो सरकार हाथ भी न लगाती। हमारे आस पास ही मुसलमानों ने अनधिकार अधिकार जमा लिये हैं। सिक्खों ने गुरुद्वारे बना लिये हैं। उनसे सरकार नहीं बोलती। सब से निर्बल हिन्दु और उसमें भी वर्णाश्रमी सनातन धर्मी समझ लिये हैं। उनकी मान्यता पर ही स्थान-स्थान पर कुठाराघात किया जा रहा है। किया क्या जाय यह तो युग का दोष है। 'अयंतु युग धर्मो ही वर्तते कस्य दूषणं' हमारा स्थान राजकीय पथ पर है। जो भी देश विदेशों से यात्री आते हैं। इसी मार्ग से निकलते हैं। प्रधान मंत्री दिन में अनेकों बार इसी राजपथ से जाती आती हैं। देहली में भवनों की कमी नहीं, एक-से-एक बढ़िया भवन हैं। विदेशों में यहाँ से भी सुन्दर सैकड़ों मंजिल वाले भवन हैं। वे यहाँ भवन देखने नहीं आते। भारतीयता देखने आते हैं। सड़क के किनारे हमारे आश्रम के नीचे पक्का सरोबर बन जाता। ऊपर आश्रम में २६ फुट के हनुमानजी विराजमान हो जाते, पीछे की पहाड़ी विल्व बन बन जाता। सैकड़ों बेल के वृक्ष लग

जाते, तो यह भारतीयता का कैसा सुन्दर दृश्य होता ! विदेशियों के लिये यह एक दर्शनीय स्थान हो जाता। दिल्ली के लोग जो अवकाश के समय में वनविहार (पिकनिक) को आते उनके लिये मनोरंजन का एक स्थान बन जाता। विल्ववृक्षों के फलों से कितना उपकार होता। किन्तु हमारी सरकार तो आँख मूँद कर पश्चात्य सभ्यता का अनुकरण कर रही है। भारतीयता को तो वह जड़मूल से मिटाने के लिये कृत संकल्प है।

सड़कों पर सफेदा (यूक्लिप्टिस) के लाखों करोड़ों वृक्ष लगा दिये हैं। इस सफेदा (यूल्किप्टिस) पेड़ से हानिकारक स्यात् ही कोई पेड़ हो। यह पानी का तो शत्रु है। इसकी जड़ें दूर-दूर के पानी को सोख लेती हैं, जहाँ इसके पेड़ लगे हैं, वहाँ के कूए सूख जाते हैं। न इसमें फल लगते हैं न फूल। जिस देश में आम, जामुन, कटहल, बेल, आँवला ऐसे फल वाले पवित्र पेड़ हों वहाँ यह प्यासा विदेशी पेड़ किस काम का ? देहली से जो आगरे को सड़क गयी है, उसमें इन्हीं प्यासे पेड़ों की भरमार है। पंजाब आदि में जहाँ-जहाँ मैं गया। यही पानी का शत्रु पेड़ सड़कों के किनारे देखा। इसके स्थान पर बेल के पेड़ लगते तो आय भी होती। स्वास्थ को भी लाभ पहुँचता किन्तु सुने कौन ? न काश्चित् शृणोति मे" लगभग ५० वर्ष पहिले मैं अलीगढ़ से छतारी गया था। उस समय सड़क के दोनों ओर बड़ी-बड़ी जामुनों के वृक्ष लगे थे। सड़क जामुनों से पटी पड़ी थी। गाँव के बच्चे बीन २ कर खा रहे थे। ऐसे ही फल वाले वृक्ष सड़कों पर लग जायँ, या सरकार किसानों को लगाने का ठेका दे दे, तो कितना जनता का उपकार हो। बस इतना ही कह कर मैं वृक्ष लगाने के माहात्म्य को समाप्त करता हूँ। अब उपसंहार और लिखकर इस "विल्व-फल अमृतफल" नामक ग्रन्थ को समाप्त करता हूँ।

छप्पय

विल्ववृक्ष घरमाहिँ होय लक्ष्मी बसि जावै।
श्रीफल जाको नाम वृक्षमें श्री नित आवै॥
रोग दोष मिटि जायँ शम्भु सिर पत्र चढ़ावै।
अपनो सब परिवार अतिथि फल पक्के खावै॥
शरबत पक्के को बने, कच्चो ओषधि काममें।
पेड़ बेल रोपो अवसि, घरमें, बनमें, गाँवमें॥



उप-संहार

चैत्रादि चतुरो मासान् सिञ्चेद् विल्व तरुं कृती।
यथा स्निग्धो भवेद् वृक्षस्तथा तत् पितरोऽपि च ॥
चैत्रादि चतुरो मासान् सदा भ्रमति शङ्करः।
नवीन विल्व पत्रार्थी भुक्ति-मुक्ति प्रदायकः ॥*

(बृहद् धर्म पुराणे)

छप्पय

बेल लगावै अधिक दोष दारिद दुख हर्ता।
धरम दीठितैं सकल सुमंगल सद्गुन कर्ता॥
आयुवेदतैं लखै सकल नासै रोगनिकूँ।
पके बेलकूँ खाय परम सुख होइ सबनिकूँ॥
अरथ दीठितैं बेल तरु, आय बढ़ावै पुन्यप्रद।
सोचो तो यह बेल फल, धनप्रद, हितकर अति सुखद॥

मनुष्य जो भी कार्य करता आगे पीछे की सोच समझकर करता है। इस कार्य के करने से मुझे लाभ क्या है। परलोक की बात तो दूर की है। उसे तो पुण्यात्मा आस्तिक धर्म भीरु

---

* चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ इन चारों महीनों में जो बेल वृक्ष को जल से सींचता है तो ज्यों-ज्यों वृक्ष गीला होता है त्यों-त्यों उसके पितर भी पानी पाकर तृप्त होते जाते हैं। चैत्र आदि चारों मासों में शंकरजी घूमते रहते हैं कि हम पर कोई नवीन बेल के पत्ते चढ़ावे जो भोग मोक्ष दोनों को देने वाले हैं।

और धर्मात्मा ही सोचते हैं। पुण्य की प्राप्ति तो मृत्यु के पश्चात् होगी। स्वर्ग किसने देखा है। किसी ने देखा भी हो, तो वह लौट कर बताता नहीं। प्रायः सर्व साधारण लोग उसी काम में प्रवृत्त होते हैं, जिससे आर्थिक लाभ हो, उस कार्य का फल हमें यहीं इसी जीवन में तत्काल मिल जाय। अब इसी दृष्टि से विचार करना है। धार्मिक दृष्टि से बेल मंगलप्रद है, पुण्य प्राप्त कराता है। आयुर्वेदिक दृष्टि से बेल सब रोगों की विशेषकर उदर रोगों की रामबाण औषधि है किन्तु बेल के पेड़ लगाने से कुछ आर्थिक लाभ भी हो सकता है या नहीं।

यदि निष्ठापूर्वक अच्छे बेलों के वृक्ष लगाये जायँ, तो वे आर्थिक दृष्टि से भी लाभप्रद हैं। एक बीघा खेत के चारों ओर किनारे-किनारे बेल के पेड़ लगाये जायँ तो १०।१२ पेड़ लग सकते हैं। ७।८ वर्ष में बेल फल देने लगता है। आजकल बाजार में बेल लेने जाओ तो एक अच्छा बेल रुपया डेढ़ रुपये से कम में नहीं मिलता। मान लो एक बेल पर कम से कम ५० बेल भी लगें, तो दश बेलों में ५०० की वार्षिक आय तो हो ही सकती है। बीच खेत में और भी कुछ बो सकते हैं।

फिर बेल के पेड़ लगाने में एक बड़ा भारी लाभ यह है कि उसकी रक्षा पशु पक्षियों से नहीं करनी पड़ती। हमारे यहाँ पचासों पेड़ आमरूद के हैं। फल पकने भी नहीं पाते कि सैकड़ों सुग्गे तथा कौए आदि पक्षी आ जाते है। खाते हैं सो तो खा ही जाते हैं कुतर-कुतर कर डाल जाते हैं। कभी-कभी तो हम लोगों को फल मिलते ही नहीं। आम, जामुन, अमरूद आदि फल के वृक्षों को जब तक रखाया न जाय, तब तक पशु-पक्षी, आदमी कोई छोड़ते ही नहीं

बेल के फलों को रक्षा की कोई आवश्यकता नहीं। सर्व साधारण लोग भी कच्चे बेलों को नहीं तोड़ते। वे कच्चे कड़वे होते

हैं। भूनकर भी रोगी भले ही खायँ उनमें कोई स्वाद नहीं। पक्षी खायँ तो उनकी चौंच ही टूट जाय, उसका छिलका इतना कड़ा होता है कि कोई पक्षी खाना तो पृथक् उस पर बैठता भी नहीं। इसलिये विल्व के फल सदा सुरक्षित रहते हैं। माली तो उसकी पत्तियों को फलों को भी बेचते हैं, शिवजी पर चढ़ाने को पूजा के लिये प्रायः सभी धार्मिक लोग फूल तुलसी के साथ बेलपत्र लेते हैं। इस दृष्टि से बेल वृक्ष आर्थिक दृष्टि से भी उपयोगी है।

और वृक्ष तो ईंधन के लिये काटे भी जाते हैं। बेल के वृक्ष को आस्तिक लोग काटते भी नहीं। धर्म शास्त्रों में बेल की शाखा, बेल के वृक्ष को काटने का बड़ा दोष बताया है। बह्निपुराण में बताया है—यह विल्ववृक्ष सब लोकों के लिये अछेद्य बताया है। जो विल्ववृक्ष को काटते हैं, उनका सदा नाश हो जाता है। जो पापी दुराचारी श्रीफल के वृक्ष को काटते हैं, वे अधम अवी-च्यादि जो नरक हैं, उनमें ब्रह्माजी के दिन पर्यन्त अर्थात् एक कल्प पर्यन्त-जब तक सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग ये चारों युग एक सहस्र, सहस्र बार बीत जाते हैं। दुष्कुलीन लोग बेल वृक्ष का छेदन करने वाले, अत्यधिक दुखी होंगे। जिस देश में विल्व के वृक्ष काटे जाते हैं। उस देश में नित्य भय होता है। उस देश का राजा बहुत दिनों तक जीता नहीं। जो विल्व वृक्ष को काटते हैं, वे कभी धनवान् नहीं हो सकते। जिस देश के लोग फूल फल वाले विल्ववृक्ष को काटते हैं। उस देश में घोर अनावृष्टि का भय होता है। इसलिये विल्व के वृक्ष को कभी न काटे।+

+ अच्छेय: सर्व्वलोकानां छेदान्नाश: सदा नृणाम्।
ये च पापा दुराचारा: श्रीफलोच्छेदकारिण: ॥

इस प्रकार विल्ववृक्ष लगाने का जितना ही भारी पुण्य बताया गया है उतना ही भारी उसके वृक्ष को काटने का पाप बताया है। इस प्रकार कल्याण की कामना करने वाले धार्मिक पुरुष को विल्व के वृक्ष का छेदन कभी न करना चाहिये। बहुत से लोग बेलपत्री लेने जाते हैं। तो उसकी पूरी डाली को ही तोड़ लाते हैं। उसमें से पत्ता तोड़कर डाली को फेंक देंगे। यह भी बड़ा भारी पाप है।× बेलपत्र तोड़ने जाय तो वृक्ष पर चढ़े नहीं। किसी नसैनी द्वारा शनैः शनैः केवल पत्तों को ही तोड़ ले। वह भी पूजन के ही निमित्त तोड़े। इस प्रकार वृक्ष में भी देव भावना करके तब उसकी आज्ञा से पत्र, पुष्प तथा फलादि तोड़ना चाहिये। विल्ववृक्ष तो साक्षात् शिव रूप ही है और विष्णुवल्लभा भगवती श्री देवी जी का तो नित्य निवास ही है। ऐसे शिव स्वरूप विल्ववृक्ष को बार-बार प्रणाम करते हुए अमृत-फल विल्वफल के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए इस पुस्तक को समाप्त करते हैं।

ते त्ववीच्यादि नरके पात्यन्ते ब्रह्मणो दिनम्।
सुदुःखिता भविष्यन्ति नरा दुष्कुलिनः सदा॥
तत्र देशे भयं नित्यं चिरं राजा न जीवति।
न च द्रव्यपतिः कश्चिद् विल्ववृक्षस्य छेदकः॥
क्रियते यत्र विच्छेदः सदुष्पफलिनस्तरोः।
अनावृष्टि भयं घोरं तस्मिन् देशे प्रजायते॥

(वह्निपुराणे वामन प्रादुर्भाव नामाध्याये)

× शाखाभङ्गो न कर्तव्यो नैवारोहेत्तथा तरुम्।
तरु मारुह्य चिनुयान्न शाखाभंजनं क्वचित्॥

(योगिनी तन्त्रे)

छप्पय

हे हरिहर प्रिय विल्व! कृष्ण पद प्रीति दृढ़ाओ।
हे शिव शंकर रूप! इष्टमें भक्ति वढ़ाओ॥
हे माँ लक्ष्मी! विल्व वास है सदा तिहरो।
हे जननी! उद्धार करो तजि दोष हमारो॥
हे श्री देवी लच्छिमी! हो तुम श्रीहरिकी प्रिया।
हे माँ! तन मन वचनतैं, हों सब तव–पति हित क्रिया॥



परिशिष्ट

विल्व के विविध व्यंजन

१—बेल का चूर्ण

विल्व किसी भी प्रकार पेट में पहुँच जाना चाहिये। वह आँतों की क्रिया को, मल के प्रवाह को नियमित बनावेगा ही। बेल बारह महीने तो मिलता नहीं अतः उसके कुछ पदार्थ सुखाकर रख लेने चाहिये। हम चैत्र वैशाख में बहुत-सा पका बेल सुखाकर उसका चूर्ण बनाकर रख लेते हैं। आश्रम भर में जिसे भी उदर विकार होते हैं—जैसे शौच साफ न होना, पतले शौच होना, बार-बार शौच जाना, शौच की इच्छा बनी रहे, शौच उतरे नहीं। विष्ठम्भ (कब्जी) होना। इन सब पर हम बेल का चूर्ण देते हैं।

२—बिलावट

बड़ा पक्का बेल लीजिये। उसे शनैः-शनैः बीच से फोड़िये। उसके बीच से दो भाग हो जायँगे। चाकू से उन दोनों भागों के गूदा को निकाल लीजिये। गूदा निकालने पर दो कटोरी बन जायँगी। उनमें मट्ठा पीजिये, अपने कामों में लाइये। बहुत से साधु अपने कमंडल में बेल की ही कटोरी रखते हैं। उस गूदे को कपड़े से छानकर उसमें थोड़ी शक्कर मिलाकर पापड़ की भाँति घृत लगाकर बेलकर सुखा लीजिये। बेल के पापड़ बन गये बारह महीने काम में लाइये। जल में भिगोकर दूध में, मट्ठा में मिलाकर प्रयोग कीजिये।

३—बेलका हलुआ।

उस पके बेल के छाने हुए गूदे को तनिक घृत में भूनकर चीनी मिलाकर हलुआ बनाइये बहुत स्वादिष्ट होगा। किन्तु अधिक दिन ठहरेगा नहीं।

४—बेल का मुरब्बा ।

कच्चे बेल को छीलकर उसके गोल टुकड़े करके उबालकर शक्कर की चासनी में डाल दें २-४ दिन में पानी आजाय, पुनः आग पर चढ़ाकर पानी जला दे। चासनी में पड़ा रहने दें वर्षों काम आवेगा।

५—बेल की कांजी

कच्चे बेल के टुकड़े करके उबालकर राई के पानी में नमक डाल कर रखदें। दो तीन दिन में खट्टा हो जायगा। वात, पित्त, कफ तीनों के लिये उपयोगी है, बहुत स्वादिष्ट तो नहीं होता किन्तु काम चलाऊ बन जाता है। हमने बनवाये हैं।

६—बेल की चटनी

कच्चे बेल को उबालकर बीज निकालकर उसके गूदे में सेंधा नमक, सोंठ, कालीमिरच, पीपल, भुना जीरा, भुनी हींग, भुनी राई, नीबू का रस, हरा पौदीना, धनिया डालकर पीस लीजिये रोटी से खाइये बहुत स्वादिष्ट चटनी बनेगी।

७—बेल के बीजों की ठंडाई ।

सौंफ, सोंठ, गुलाब के फूल, धनिया, इलायची आदि ठंडाई की वस्तुओं में बादाम के स्थान पर बेल के बीज डालकर चीनी मिला-कर घोट पीस कर पीजिये लाभदायक स्वादिष्ट दोनों ही होंगे।

८—बेल की मलाई की बरफ

आम के रस की भाँति पके बेल के छने गूदे को दूध मिला-कर ठंडे यन्त्र में रखकर जमा दीजिये सुन्दर स्वादिष्ट लाभदायक बेल की बरफ बन जायगी। बेल का शरबत तो प्रसिद्ध ही है प्रायः सभी पीते हैं। इस प्रकार बेल को कैसे भी खाइये। बेल और सौंफ की मित्रता है। बेल की जो भी वस्तु बनाओ उसमें सौंफ अवश्य मिला लेना।

॥ श्रीहरिः ॥

पूज्यपाद श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारीजी महाराज कृत "भागवती कथा" "भागवत चरित" तथा अन्यान्य दिव्य ग्रन्थों की

संक्षिप्त-सूची

श्री पूज्यपाद ब्रह्मचारीजी महाराज लिखित धार्मिक अनुपम ग्रन्थों से प्रायः सभी हिन्दी भाषा-भाषी धर्मप्राण पाठक पूर्णरीत्या परिचित हैं। श्री महाराजजी द्वारा लिखित श्री चैतन्य-चरितावली भारत में ही नहीं विश्व के साहित्य में अनुपम ग्रन्थ है। गुजराती, मराठी, तेलगु, तामिल, मलयालम तथा देश की अन्यान्य भाषाओं में इसके अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। आपकी लिखी भागवती कथा हिन्दी साहित्य में बेजोड़ ग्रन्थ है। इसे हिन्दी भाषा का समस्त धार्मिक कोश कहना चाहिये। संस्कृत साहित्य में गीता, उपनिषदें और ब्रह्मसूत्र इन तीनों को प्रस्थानत्रयी कहते हैं। महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी इनमें श्रीमद्भागवत को भी और सम्मिलित करके प्रस्थान चतुष्टयी बताते हैं। भागवती कथा में इन चारों की ही विस्तृत सरस-सरल सर्वोपयोगी व्याख्यायें हैं। इन सबका संक्षिप्त परिचय पढ़िये—

१. भागवती कथा—यह एक विस्तृत वृहद् ग्रन्थ है। अब तक इसके ११८ खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। प्रत्येक खण्ड दो सौ–ढाई सौ पृष्ठ का होता है, सादे तथा रंगीन चित्र भी रहते हैं। प्रत्येक खण्ड का इस मँहगाई काल में भी केवल ३ रुपया न्यौछावर है। डाक-व्यय पृथक्। भागवती कथा के प्रथम ६० खण्डों में तो भगवत् सम्बन्धी सरस-सरल सुमधुर कथायें हैं।

प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में एक श्रीमद्भागवत का छूँटा श्लोक होता है, उसी भाव का व्रजभाषा का छप्पय, फिर उस अध्याय की भूमिका तदनन्तर विषय विवेचन, एक-दो दृष्टान्त की कहानियाँ, उपसंहार और फिर अन्त में छप्पय। यह क्रम आदि से अन्त तक यथावत् है। प्रत्येक अध्याय एक प्रकार से स्वतन्त्र है। केवल छप्पयों को ही पढ़ते जाओ तो पूरा विषय आ जायगा। ६० भागों में तो कथा भाग है, दो भागों में माहात्म्य और ६ भागों में भागवती स्तुतियाँ हैं। इस प्रकार ६८ भागों में भागवत् विवेचन है। सोलह भागों में गीता की सरल-सुगम व्याख्या है। प्रत्येक अध्याय में दो श्लोकों की व्याख्या है, फिर २३ भागों में १९१ उपनिषदों का विवेचन है। आज तक सभी आचार्यों ने दश उपनिषदों के ही सम्बन्ध में लिखा है। १९१ उपनिषदों का विवेचन संसार की किसी भाषा में आज तक नहीं है। हिन्दी भाषा में यह प्रथम प्रयास है। १०७ वें भाग में दर्शनों का संक्षिप्त परिचय और १०८ वें भाग से ११८ वें भाग तक ब्रह्मसूत्रों पर विवेचन है।

इस प्रकार भागवती कथा समस्त आर्य वैदिक सनातन वर्णाश्रम धर्म का प्रतिनिधित्व करती है। भाषा इतनी सरल-सुगम सुबोध है कि बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, पठित-अपठित सभी सरलता से समझ सकते हैं। देश के कोने-कोने में सहस्रों स्थानों पर इसकी नित्य नियमित कथायें होती हैं। जिनसे नित्य लाखों स्त्री-पुरुष लाभ उठाते हैं। प्रत्येक ग्राम में, प्रत्येक घर में भागवती कथा रहने से धार्मिक वातावरण बन जाता है।

उत्तर प्रदेश, बिहार तथा बहुत-सी जिला परिषदों के पुस्तकालयों के लिये सरकार द्वारा स्वीकृत है। ३५ रुपया भेजकर स्थायी ग्राहक बनें। वर्ष के १२ खण्ड आपको घर बैठे रजिस्ट्री से मिल जाया करेंगे।

विद्वानों, नेताओं तथा प्रतिष्ठित पुरुषों ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। हमारा बड़ा सूची-पत्र बिना मूल्य मँगाकर बहुत से विद्वानों की सम्मतियाँ पढ़ें। यह ग्रन्थ किसी का अक्षरशः अनुवाद नहीं स्वतन्त्र विवेचन है।

२. भागवत चरित सप्ताह (पद्यों में)—यह भागवत का सप्ताह है। छप्पय छन्दों में लिखा है। सैकड़ों सादे चित्र ५-६ बहुरंगे चित्र हैं कपड़े की सुन्दर जिल्द है, लगभग हजार पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य ११ रु०। सहस्रों नर-नारी इसका नित्य नियम से पाठ करते हैं। इससे लीला करने वाले लीला भी करते हैं अब तक इसके ५।५ हजार के ६-७ संस्करण छप चुके हैं।

३. भागवत चरित (सटीक दो भागों में)—अनुवादक— पं० रामानुज पाण्डेय, बी० ए० विशारद 'भागवत चरित व्यास' भागवत चरित की सरल हिन्दी में सुन्दर टीका है, प्रत्येक खण्ड में ९०० पृष्ठ हैं, लगभग ५०० सादे चित्र हैं ४।५ रंगीन चित्र मूल्य ४२ रुपया। एक खण्ड का २१ रुपया।

४. बद्रीनाथ दर्शन—श्री बद्रीनाथ दर्शन यात्रा पर यह बड़ा ही खोजपूर्ण ग्रंथ है। बद्रीनाथ यात्रा की सभी आवश्यक बातों का तथा समस्त उत्तराखण्ड के तीर्थों का इसमें वर्णन है। लगभग सवा चार सौ पृष्ठों की सजिल्द सचित्र पुस्तक का मूल्य ६ रुपया भारत सरकार द्वारा अहिन्दी प्रान्तों के लिये स्वीकृत है।

५. महात्मा कर्ण—महाभारत के प्राण महात्मा कर्ण का यह अत्यन्त ही रोचक, शिक्षाप्रद तथा आलोचनात्मक जीवन-चरित्र है। ३४० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य ५ रुपया। जनता ने इसे बहुत ही पसंद किया है। इसके ६ संस्करण छप चुके हैं।

६. मतवाली मीरा—मीरा बाई के दिव्य जीवन की सजीव

झाँकी तथा उनके पदों की रोचक भाषा में व्याख्या। २२४ पृष्ठ की सचित्र पुस्तक का मू० ४ रु० है। यह इसका सातवाँ संस्करण है।

७. नाम संकीर्तन महिमा—नाम संकीर्तन महिमा के ऊपर जितनी भी शङ्कायें उठ सकती हैं उनका शास्त्रीय ढङ्ग से युक्तियुक्त विवेचन है। मूल्य १ रुपया। इसे पढ़ लेने पर भगवन्नाम संकीर्तन पर किसी भी प्रकार की शंका नहीं हो सकती।

८. श्रीशुक (नाटक)—श्रीशुकदेव मुनि के जीवन की दिव्य झाँकी। पृष्ठ सं० १००, मूल्य १ रुपया।

९. भागवती कथा की बानगी—भागवती कथा के खण्डों के कुछ अध्याय बानगी के रूप में इसमें दिये गये हैं। इसे पढ़कर आप भागवती कथा की शैली समझ सकेंगे। पृ० ९६ मूल्य १ रुपया।

१०. शोक शान्ति—अपने प्रिय स्वजनों के परलोक प्रयाण पर सान्त्वना देने वाला मार्मिक पत्र। शोक सन्तप्तों की सञ्जीवनी बूटी है। इससे लाखों शोक संतप्त नर-नारियों को शांति प्राप्त हुई हैं जिनके स्वजन अकाल में काल कवलित हुए हैं। पृष्ठ ६४, मूल्य ५० पैसे। षष्टम् संस्करण।

११. मेरे महामना मालवीयजी—महामना मालवीय जी के सुखद संस्मरण। १३५ पृष्ठ की छोटी पुस्तक, मूल्य ५० पैसे।

१२. भारतीय संस्कृति और शुद्धि—क्या अहिन्दु पुनः हिन्दु बन सकते हैं, इस प्रश्न का शास्त्रीय ढङ्ग से प्रमाणों सहित विवेचन बड़ी ही मार्मिक भाषा में किया गया है, वर्तमान समय में जब विधर्मी अपनी संख्या बढ़ा रहे हैं यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। पृष्ठ ७६ मूल्य ७५ पैसे।

१३. प्रयाग माहात्म्य—तीर्थराज प्रयाग के माहात्म्य पर ३२ पृष्ठ की छोटी-सी पुस्तिका। मूल्य ५० पैसे।

१४. वृन्दावन माहात्म्य—श्रीवृन्दावन के माहात्म्य पर लघु पुस्तिका। मूल्य २५ पैसे।

१५. राघवेन्दु चरित—(छप्पय छन्दों में)—श्रीरामचन्द्रजी की कथा के ९ अध्याय भागवत चरित से पृथक् छापे हैं। राम-भक्तों को नित्य पाठ के लिये उपयोगी है। पृष्ठ सं १६० मूल्य एक रुपया अर्थ सहित ३ रुपया।

१६. प्रभुपूजा पद्धति—भगवान् की पूजा करने की सरल सुगम शास्त्रीय विधि इसमें श्लोकों सहित बताई है। श्लोकों का भाव दोहाओं में भी वर्णित है। मूल्य ५० पैसे।

१७. गुरु-भक्ति और एकलव्य—रङ्गमञ्च पर खेलने योग्य धार्मिक नाटक, मूल्य १ रुपया।

१८. भागवत चरित की बानगी—इससे भागवत चरित के पद्यों की सरसता जान सकेंगे। पृष्ठ १०० मूल्य १ रुपया।

१९. गोविन्द दामोदर शरणागत स्तोत्र—(छप्पय छन्दों में) दोनों स्तोत्र हैं। मूल स्तोत्र भी दिये हैं। मूल्य ५० पैसे।

२०. श्रीकृष्ण चरित—भागवत चरित से यह पद्यों में श्रीकृष्ण चरित पृथक् छापा गया है। पृष्ठ सं० ३५० मू० ५ रु०।

२१. गोपालन शिक्षा—गौ कैसे पालनी चाहिये। गौओं की कितनी जाति हैं, उन्हें कैसे आहार देना चाहिये। बीमार होने पर कैसे चिकित्सा की जाय। कौन-कौन देशी दवाएँ दी जायँ, इन सब बातों का इसमें विशद् वर्णन है। पृष्ठ २०४ मू० ३ रु०।

२२. मुक्तिनाथ दर्शन—नैपाल में सुप्रसिद्ध मुक्तिनाथ तीर्थ है। यात्रा का बहुत ही हृदयस्पर्शी वर्णन है। नैपाल राज्य तथा नैपाल के समस्त तीर्थों का इसमें विशद वर्णन है, मू० ३ रुपया।

२३. आलवन्दार स्तोत्र मूल तथा छप्पय छन्दों में—अनूदित श्री वैष्णव सम्प्रदाय के महामुनीन्द्र श्रीमत् यामुनाचार्य कृत यह स्तोत्र सर्वमान्य तथा बहुत प्रसिद्ध है। ५ बार में १६५०० प्रतियाँ छपी हैं। मूल्य १ रुपया।

२४. रास पंचाध्यायी—भागवत चरित से रास पंचाध्यायी पृथक् छापी गई है। मूल्य १ रुपया।

२५. गोपी गीत—श्रीमद्भागवत के गोपी गीत का उन्हीं छन्दों में व्रजभाषा अनुवाद है। विना मूल्य वितरित की जाती है।

२६. श्रीप्रभु पदावली—श्रीब्रह्मचारीजी के स्फुट पदों का सुन्दर संग्रह है। पृष्ठ सं० १२२, मूल्य १ रुपया ५० पैसे।

२७. परम साहसी बालक ध्रुव—१०० पृष्ठ की पुस्तक मूल्य १ रुपया।

२८. सार्थ छप्पय गीता—गीता के श्लोक एक ओर मूल और अर्थ सहित छापे हैं। उनके सामने अर्थ की छप्पय है। सचित्र मूल्य ४ रु०।

२९. हनुमत् शतक—नित्य पाठ करने योग्य यह पुस्तक बहुत ही सुन्दर है। इसमें १०८ छप्पय हैं, सुन्दर हनुमान्‌जी का एक बहुरङ्गा तथा २१ सादे चित्र हैं। मूल्य १ रुपया।

३०. महावीर हनुमान्—श्री ब्रह्मचारीजी महाराज ने श्री हनुमान्‌जी का यह विस्तृत जीवन-चरित्र भागवती कथा की भाँति लिखा है, इसमें २१ अध्याय हैं। पृष्ठ सं० २०६ मूल्य ३ रुपया।

३१. भक्त-चरितावली [दो भागों में]—यदि आप चाहते हैं कि हम भी प्रभु के भक्तों की गाथा पढ़कर, भक्ति में आत्मविभोर होकर प्रभु की दिव्य झाँकी की झलक का दर्शन करें तो आज ही भक्त-चरितावली के दोनों भाग मँगाकर पढ़ें। भाग (१) पृष्ठ ४४४ मूल्य ६ रु०। भाग (२) पृष्ठ ३०३ मूल्य ४, ५० पैसे।

३२. छप्पय भर्तृहरि शतकत्रय—श्री भर्तृहरि के नीति, शृङ्गार और वैराग्य तीनों शतकों का छप्पय छन्दों में भाव अनुवाद। पुस्तक बहुत ओजस्वी कविता में है। मू० २ रु० ५० पैसे।

३३. श्रीसत्यनारायण व्रत कथा (माहात्म्य)—छप्पय छन्दों में श्लोक सहित साथ ही पूजा पद्धति भी संक्षेप में दी गई है। मू० १ रुपया।

३४. छप्पय विष्णु सहस्रनाम तथा दोहा—भाष्य सहित सहस्र नामों के सहस्र दोहे। मूल्य १ रु० ५० पैसे।

३५. भागवत चरित सङ्गीत सुधा—(स्वरकार पं० वंशीधर शर्मा 'भागवत चरित व्यास') भागवत चरित के छप्पय छन्दों को तथा पद स्तुतियों को संगीत के स्वरों में विविध रागों में लिपिबद्ध किया गया है। मूल्य १ रुपया ५० पैसे।

३६. सूक्त-त्रय (सार्थ छप्पय सहित—(१) पुरुष-सूक्त (२) श्रीसूक्त और (३) लक्ष्मीसूक्त, भगवान् श्रीलक्ष्मीनारायणजी के मनोहर चित्र के साथ न्यौछावर १ रुपया।

३७. निःश्वास—आज से ४०-४५ वर्ष पूर्व श्री महाराजजी अपनी दैनन्दिनी में कुछ मन को समझाने के निमित्त उपदेश लिखते थे। उन्हें आपके एक परमप्रिय भक्त श्री ने निःश्वास नाम से छपा दिया, इसके कई संस्करण हिन्दी तथा अँग्रेजी में छप चुके हैं। यह छोटी-सी पुस्तक बहुत ही उपादेय है। इसके उपदेश सीधे हृदय पर चोट करते हैं। मूल्य ५० पैसे।

३८. भरत-यात्रा तीर्थ माहात्म्य—न्यौछावर ५० पैसे।

३९. शुभ विवाह मङ्गलमय हो।

वर-वधू को शुभशिक्षा तथा आशिर्वाद अमूल्य।

श्री श्री चैतन्य-चरितावली

बङ्गदेश में प्रादुर्भूत श्री श्री चैतन्य महाप्रभु जिन्हें गौराङ्ग महाप्रभु भी कहते हैं ऐसा कौन-सा भगवत् भक्त होगा जो उनका नाम नहीं जानता होगा। आज से लगभग ५० वर्ष पूर्व पूज्य श्री ब्रह्मचारी जी ने भाई जी श्री हनुमानप्रसादजी पोद्दार के आग्रह पर ५ भाँगों में श्री श्री चैतन्य-चरितावली नाम से चैतन्य महाप्रभु का जीवन चरित लिखा था। देश-विदेशों की जनता में यह इतना लोक प्रिय हुआ कि कुछ ही दिनों में इसके सात संस्करण छप गये। गुजराती, मराठी, तेलगु, तामिल मलयालम तथा अन्यान्य अनेकों भाषा में इसके अनुवाद छपे और सभी ने इसकी मुक्तकण्ठ से सराहना की। कागद की कमी तथा अन्य कारणों से २०–२५ वर्ष से गीता प्रेस ने इसका छापना बन्द कर दिया। जनता में इसकी निरन्तर बढ़ती हुई माँग को देखकर हमने इस मँहगायी में भी इसके पाँचों खण्डों को छापा है। पचास वर्षों में कागद स्याही तथा अन्यान्य वस्तुओं का मूल्य बीस गुने से भी अधिक हो गया है। फिर भी हमने इनका मूल्य कम-से-कम रखा है। इनका विवरण इस प्रकार है।

१. श्रीचैतन्य-चरितावली—प्रथम खण्ड इसमें महाप्रभु के जन्म से लेकर अध्यापकी पर्यन्त ३९ अध्याय हैं। पृष्ठ २९४, ६ तिरंगे सुन्दर भावपूर्ण चित्र सजिल्द मूल्य ५ रु० ५० पैसे।
२. श्रीचैतन्य-चरितावली—द्वितीय खण्ड इसमें सर्व प्रथम संकीर्तन से लेकर संन्यास पर्यन्त ४१ अध्याय हैं। पृष्ठ सं० ३०३, भावपूर्ण ४ रङ्गीन चित्र सजिल्द का मूल्य ५ रु० ५० पैसा।
३. श्रीचैतन्य-चरितावली—तीसरा खण्ड इसमें संन्यास दीक्षा से लेकर दक्षिण यात्रा के विचार पर्यन्त २१ अध्याय हैं।

भावपूर्ण ७ रङ्गीन चित्र हैं पृष्ठ ३८४ सजिल्द मूल्य ६ रुपया ।

४. श्रीचैतन्य-चरितावली—चौथा खण्ड इसमें प्रभु की वृन्दावन यात्रा से लेकर श्री रघुनाथ दास गौस्वामी का उत्कट वैराग्य पर्यन्त २४ अध्याय हैं। ५ भावपूर्ण रङ्गीन चित्र हैं। पृष्ठ सं० २३४ सजिल्द का मूल्य ५ पाँच रुपया।

५. श्रीचैतन्य-चरितावली—पाँचवाँ खण्ड इसमें छोटे हरिदास को स्त्री दर्शन के दण्ड से लेकर विरहोन्माद की दशाओं का वर्णन तथा ग्रन्थ समाप्ति पर्यन्त ३० अध्याय हैं। भावपूर्ण रङ्गीन ४ चित्र हैं पृष्ठ सं० २८१ सजिल्द का मूल्य ५ रुपया ५० पैसा। आज ही मँगाइये।

बिल्वफल-अमृतफल

आयुर्वेद तथा धार्मिक दृष्टि से विल्व का क्या माहात्म्य है, इसका बड़ी रोचक भाषा में वर्णन किया है। बेल की जड़, पत्ते, फूल, फल, वल्कल, कांटे तथा छाया सभी का शास्त्रीय उपयोग बताया है। विल्व की सूखी बेलगिरी कौन-कौन-सी ओषधियों में काम आती हैं, उन ओषधियों का नाम गिनाया है। बेल का फल पेट के समस्त रोगों के लिये जैसे अर्श, अतिसार, संग्रहणी आदि के लिये रामबाण ओषधि है, विल्व का किस प्रकार सेवन किया जाय, विल्व से कौन-कौन-सी ओषधियाँ बनती है और उनसे कितने लोग लाभान्वित हुए हैं, इन सब बातों का सप्रमाण वर्णन है। विल्व के बीजों के तैल से किस प्रकार काया कल्प हो सकता है, इन सभी उपयोगी बातों का इसमें सटीक वर्णन है।

लगभग १०० पृष्ठ की परम उपयोगी पुस्तक का मूल्य दो रुपये मात्र ही हैं।

पता—संकीर्तन भवन, पो० झूसी [जिला इलाहाबाद]

नर्मदा-दर्शन

पूज्य ब्रह्मचारी जी का यह अभी प्रकाशित होने वाला परम दिव्य नूतनतम ग्रन्थ है। श्री महाराज जी ने लगभग ३०० यात्रियों के साथ मोटरों द्वारा श्री नर्मदाजी की २६ दिनों में परिक्रमा की थी। मध्य प्रदेश तथा गुजरात की प्रत्येक नगर तथा ग्रामों की जनता ने यात्रियों का कैसा भव्य स्वागत किया इसका बड़ा ही रोचक वर्णन है। मोटर से यात्रा करने पर मार्ग में कौन-कौन से ग्राम नद-नदी तथा तीर्थ पड़ते हैं उनका सविस्तार वर्णन है। यदि पैदल यात्रा करें तो नर्मदा किनारे-किनारे कौन-कौन से घाट नगर ग्राम पड़ेंगे उनका विस्तार के साथ वर्णन है। सब तीर्थों की पौराणिक सरस रोचक कथायें हैं। कौन से तीर्थ से आगे का तीर्थ कितनी दूर है इस प्रकार नर्मदा किनारे के दोनों तटों के समस्त तीर्थों का विधि विधान पूर्वक वर्णन है। पुस्तक में चालीस चित्र हैं। सुन्दर टिकाऊ जिल्द कवर पर भव्य रङ्गीन माता नर्मदा का चित्र है। श्री महाराज जी ने २६ दिनों में यह यात्रा की थी। अतः ग्रन्थ में २६ ही अध्याय हैं। पुस्तक पढ़ते-पढ़ते ऐसा लगता है मानों हम भी परिक्रमा कर रहे हैं। सुन्दर सचित्र सजिल्द ४२८ पृष्ठ की पुस्तक न्यौछावर १०) दस रुपये मात्र है।

पता—संकीर्तन भवन, पो० भूसी [जिला इलाहाबाद]

सनातन माधुर्य ग्रन्थ माला के १२ अनुपम ग्रन्थ

रचयिता—श्री १०८ श्री स्वामी सनातनदेवजी महाराज

स्वामी सनातनदेवजी गीता प्रेस के सुप्रसिद्ध लेखक हैं। इस समय भगवत् कृपा से उनको भगवत् सम्बन्धी कविताओं की स्फूर्ति होने लगी है। स्वतः ही पदों की रचना हो जाती है। इस समय तक आप के द्वारा २०-२२ ग्रन्थों की रचना हो चुकी है। उनमें से निम्नलिखित १२ ग्रन्थ प्रकाशित होकर हमारे यहाँ से मिलते हैं। इन पदों में प्रगाढ़ भगवत् भक्ति के भाव भरे हैं। पाठक इन्हें पढ़कर भावविभोर हो जायँगे। वे ग्रन्थ ये हैं—

सनातन माधुर्य ग्रन्थ माला के १२ अनुपम ग्रन्थ

रचयिता—स्वामी श्री सनातनदेवजी

१—माधुर्य-मन्दाकिनी—इसमें विविध राग रागिनियों में २५० पद हैं। न्योछावर ३) रुपये मात्र।

२—माधुर्य-तरङ्गिणी—इसमें भी ऐसे ही लगभग २५० पद हैं। इसका भी मूल्य ३) रुपये है। डाक व्यय पृथक्।

३—माधुर्य लहरी पृष्ठ २२६—मूल्य ३)

४—माधुर्य मञ्जूसा पृष्ठ—२०१ मू० ३)

५—माधुर्य-कौमुदी पृष्ठ—१६० मू० ३)

६—माधुर्य-मकरन्द पृष्ठ—१८० मू० ३)

७—माधुर्य-सुरसरि पृष्ठ—१८४ मू० ३)

८—माधुर्य-मयङ्क पृष्ठ—१८१ मू० ३)

९—माधुर्य निकुञ्ज पृष्ठ—१६७ मू० ३)

१०—माधुर्य-निर्झर (बड़े आकार के) पृष्ठ—१६८ मू० ३)

११—माधुर्य-लतिका पृष्ठ—१६८ मू० ३)

१२—माधुर्य वाटिका (प्रेस में है)

इन ग्रन्थों पर कुछ विद्वानों की सम्मति पढ़िये—

स्वामी श्री सनातनदेवजी महाराज के ग्रंथों की समीक्षा

समीक्षक— हिन्दी के मूर्धन्य विद्वान, भाषा विज्ञान एवं विविध भाषाओं के आचार्य प्रयाग विश्वविद्यालय एवं जबलपुर विश्वविद्यालय के भू० पू० प्राध्यापक पं० डॉ० उदयनरायण तिवारी एम० ए० डी० लिट् एवं उनके शिष्य डॉक्टर श्रीनिवास पांडेय एम० ए० डी. लिट्

स्वामी सनातनदेव द्वारा विरचित पदों में राधा-कृष्ण की युगल-मूर्ति की अनेक माधुर्य लीलाओं की सरस अभिव्यक्ति हुई है। आधुनिक युग की समस्त भौतिकताओं एवं यांत्रिकताओं के बीच रचित ये मार्मिक काव्य अवश्य ही रसिकजनों के आह्लाद का हेतु बनेगा। इन पदों में भक्त-हृदय के अन्तर्मन में उठने वाले कोमल भावों की मनोरम अभिव्यक्ति हुई है। ये पद अपनी रमणीयता के कारण 'सूर' के पदों की याद दिलाते हैं।

राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं से सम्बन्धित अनेक पद समय-समय पर स्वामीजी द्वारा लिखे गये हैं। मैथिल कोकिल विद्यापति से लेकर आज तक हिन्दी साहित्य में अनेक काव्य-ग्रन्थों का प्रणयन हुआ है। लेकिन उनमें भी 'विद्यापति पदावली' एवं 'सूरसागर' का विशेष स्थान है। इस परम्परा की अगली कड़ी के रूप में ये ग्रन्थ निश्चय ही प्रतिष्ठित होंगे।

जीव आनन्दानुभूति तो प्राप्त करता ही है, लेकिन उसके वियोग में भी वह उसी के ध्यान में डूबा रहता है। विरह की अवस्था में भी वह अपने अन्तर्मन में सतत प्रिय की याद को सँजोये रहता है और निशिदिन उनके दर्शन की लालसा उसके अन्दर उमड़ती रहती है। इस दृष्टि से 'बिरह माधुरी' के पद विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 'बिरह की व्याधि बुरी री माई',

कैसे हूँ चित चैन न पावै', 'यह जीवन जंजाल भयो री, एवं 'पिया बिनु लगत न ब्रज नीको' आदि पदों में कृष्ण रहित जीवन की निस्सारता को व्यञ्जित किया गया है। इसी प्रकार 'मेरे मन बसी सखी ! वह जोरी' एवं 'जुगल छवि छाइ री मन में' में युगल-मूर्ति की त्रिभुवन मोहिनी सौन्दर्य की मार्मिक अभिव्यंजना की गई है 'मेरो मन चहत स्याम को संग' तथा 'अँखियाँ रूप सुधा की प्यासी' आदि पदों में प्रभु के प्रति अगाध प्रेम को व्यक्त किया गया है। इन पदों के पढ़ते ही सूरदासजी के अनेक पद (अँखिया हरि दरसन को प्यासी आदि) याद आ जाते हैं। सूर के पदों से इन पदों की इतनी अधिक साम्यता है कि यदि कवि का नाम न बताया जाय तो यह पहचानना कठिन होगा कि कौन-सा पद 'सूर' का है और कौन-सा पद 'स्वामी सनातन' जी का। 'हरि बिनु जीवन भार भयो' तथा 'यह तन काहू काम न आयो' आदि पदों में लौकिक जगत की निस्सारता का वर्णन कर भक्त को ईश्वरोन्मुख करने की चेष्टा की गयी है। सूर के अनेक पदों का भावानुवाद भी सनातनदेवजी के पदों में मिलता है, लेकिन उनकी सहज भक्ति-भावना से आप्लावित ये पद अपनी मौलिकता की विशिष्ट छाप पाठक पर छोड़ते हैं। ग्रन्थ के अन्तिम अंश में राधा-कृष्ण की 'लीला माधुरी' का सरस वर्णन कर उनकी ललित चेष्टाओं का चित्रण किया गया है। "विपिन सों आवत हैं दोउ भैया' तथा अन्तिम पद 'मोहिं आवत सुधि सखि सावन की' अपनी काव्यात्मकता एवं अगाध भक्ति भावना की दृष्टि से बेजोड़ बन गये हैं।

स्वामी सनातनदेवजी व्रजभाषा के रस सिद्ध कवि हैं। उनके अन्तर्मन में राधा-कृष्ण के माधुर्य प्रेम का अक्षय भंडार संचित है, जिसका परिणाम है कि वे गत चार वर्षों से भी अधिक

समय से निरन्तर युगल सरकार की माधुर्य लीलाओं का सरस गायन कर रहे हैं। अब तक उनके अन्तर्मन से अट्ठाईस सौ से भी अधिक पदों की रचना हो चुकी है। प्रायः कहा जाता है कि सूरदासजी ने सवा लाख पदों की रचना की है परन्तु वास्तव में आज उनके द्वारा रचित पदों की संख्या तीन हजार एवं साढ़े तीन हजार के बीच ही है। उनमें भी कई जगह पुनरुक्ति है। नाभादासजी ने कलियुग के लोगों के निस्तार हेतु तुलसीदासजी को वाल्मिकी का अवतार कहा है। उसी तरह यदि स्वामी सनातनजी को सूरदासजी का अवतार कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।

स्वामी सनातनजी की भक्ति भावना का अजस्र स्रोत सतत् प्रवाहित होता रहता है, जिससे उनमें नित नवीनता एवं रमणीयता की वृद्धि होती रहती है। उनके पदों की सबसे बड़ी विशेषता है कि वे लगभग समान भावों एवं अनुभूतियों को भी व्यक्त करते समय नीरस एवं पुनरुक्ति से नहीं प्रतीत होते। इस अजस्र प्रवाह का ही परिणाम है कि उन्होंने 'माधुर्य लहरी', 'माधुर्य मञ्जूसा', 'माधुर्य मयंक', 'माधुर्य मकरन्द', 'माधुर्य मन्दाकिनी', 'माधुर्य तरङ्गिणी' एवं 'माधुर्य-निर्भर' जैसे अनेक ग्रंथों का सृजन किया है। ये सभी ग्रन्थ उनकी अगाध भक्ति-भावना एवं उच्चकोटि की कवित्व शक्ति के परिचायक हैं।

पता—संकीर्तन भवन, पो० झूसी (प्रयाग)

१. अनन्त श्रीविभूषित सर्वतन्त्र स्वतन्त्र श्रीस्वामी अखण्डानन्द जी सरस्वती महाराज की शुभ-सम्मति

शुभ कामना

श्री राधा माधव के प्रेम-माधुर्य-रस में मग्न स्वामी सनातन देवजी महाराज की वाणी युगल-प्रेम की संगीत-धारा का उद्गम बन गई है। उसी प्रवाह में अब माधुर्य सुरसरि प्रकट हुई है। उनकी रसानुभूति की यह स्वाभाविकी अभिव्यक्ति है। युगल सरकार के रसिक प्रेमियों के लिये यह अपूर्व प्रेम व्यञ्जन है। वे इसका अवगाहन एवं रसास्वादन करके श्री राधा-माधव लीला के आनन्द में मग्न हो जायँ—यही मेरी कामना है।

अखण्डानन्द सरस्वती

२. स्वनामधन्य स्वर्गीय आचार्य श्री हजारीप्रसादजी द्विवेदी—

इन पदों में एक अद्भुत भक्तिभाव और समर्पण की भावना है, जिसे कोई समर्पित व्यक्ति ही अभिव्यक्त कर सकता था। श्रीराधा-माधव के प्रति आपकी जो अनन्य भक्ति है और उनके चरणों तक पहुँचने की जो व्याकुल लालसा है वह मेरे जैसों को भी बहुत आकृष्ट करती है।.........उसमें जो विह्वल समर्पण भाव और व्याकुलता है वह तो अभिभूत कर देने वाली है। आप मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

३. कुँवर चन्द्रप्रकाशसिंह एम० ए०, डी० लिट्

(सेवा निवृत्त वरिष्ठ आचार्य एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष मगध विश्वविद्यालय)

किन शब्दों में धन्यवाद दूँ मूक हो रही वाणी।
श्यामा-श्याम रूप हैं पाँचों कृतियाँ ये कल्याणी ॥

वर्ण-वर्ण में भासमान है दिव्य साधना धन्या।
रसिकों का अवलम्ब परम है यह रस सृष्टि अनन्या॥
रस-माधुर्य महार्णव में मैं डूब-डूब उतराता।
अन्तर्मुख हो रहीं वृतियाँ अपरिमेय मधु-स्नाता॥
पंक्ति-पंक्ति में कलित आपकी कला अकल कमनीया।
भरी अर्थ गौरव से अभिनय पदावली महनीया॥
अभिनन्दन स्वीकार करें हे कविर्मनीसी ! मेरा।
दें आशीष, मधुर दम्पति का उर में रहें बसेरा॥

४. डा० श्रीभगवतीप्रसादसिंहजी डी० लिट्

(आचार्य तथा अध्यक्ष हिन्दी विभाग गोरखपुर विश्वविद्यालय)

सरसरी दृष्टि से देखने पर इतना अभास अवश्य मिला कि प्रस्तुत कृतियों में आपकी अमूल्य भाव-निधि बड़ी ही सरस शब्दावली में संजोई हुई है। भूमिका में रचयिता के निश्छल हृदय की अनुभूतियाँ तरंगायित हैं।

५. डा० श्रीधर्मनारायणजी ओझा एम० ए० पी० एच० डी०

(प्राध्यापक हिन्दी विभाग जोधपुर विश्वविद्यालय)

सहृदय पाठकों को ये पद महाभाव का शाश्वत आनन्द प्रदान कराते हैं। भाव, भाषा, अलङ्कार योजना, छन्दोविधान, पदन्यास, नाद सौन्दर्य और वर्णविन्यासादि की दृष्टि से ये पद हिन्दी के सर्वोत्कृष्ट पदों से समता करने में समर्थ हैं।

श्री स्वामी सनातनदेवजी महाराज के समस्त
ग्रन्थों के प्रकाशक

पता—संकीर्तन भवन, पो० झूसी [प्रयाग]

॥ श्री हरिः ॥

श्री ब्रह्मचारी जी द्वारा लिखित

एक अद्भुत और नूतन ग्रन्थ
कल्प और कायाकल्प–चिकित्सा।

रोगों के लिये रसपर्पटी, सुवर्णपर्पटी, पंचामृत पर्पटी आदि अनेकों कल्पों का तथा कायाकल्प के सैकड़ों योगों का इसमें शास्त्रीय वर्णन है। कल्प क्या है, काया क्या है, पंच कर्म कैसे किये जाते हैं कायाकल्प के कौन अधिकारी हैं, कायाकल्प कैसे किया जाता है, इन सभी बातों का विस्तार से वर्णन है। शीघ्र ही प्रकाशित होगी।

पता–संकीर्तन भवन, प्रतिष्ठानपुर
पो० झूसी (प्रयागराज)